मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक पत्र

वर्ष : 3 | अंक : 07 | पृष्ठ : 35 | मूल्य : नि:शुल्क | इंदौर–उज्जैन | बुधवार 1 फरवरी 2023 | माघ/फाल्गुन मास (12), विक्रम संवत् 2079 | इ. संस्करण

चरित्र बल, विवेकशीलता, कर्तव्यनिष्ठा एवं अनुशासन प्रियता जैसे गुण मानव में ही पाए जाते हैं..... 05

भाषाएं किसी भी संस्कृति का आईना होती हैं और एक भाषा की समाप्ति का अर्थ है कि एक पूरी सभ्यता और संस्कृति का नष्ट होना। इस तरफ सभी देशों को ध्यान देने की जरुरत है, अन्यथा दुनिया अपनी सभ्यता, संस्कृति व समृद्ध विरासत को यूँ ही खोती रहेंगी.... 18

'हे जननी, यदि तुम्हें संतान को जन्म देना है तो आस्थावान, कल्याणकारी या शौर्यशाली संतान को ही जन्म देना..... 11

आनन्द में वचन मत दीजिए, क्रोध में उत्तर मत दीजिए, दुःख में निर्णय मत लीजिए, इतना छोटा कद रखिए कि सभी आप के साथ बैठ सके और इतना बड़ा मन रखिए कि जब आप खड़े हो जाऐं, तो कोई बैठा न रह सके.... 15

अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस 21 फरवरी पर विशेष आलेख

भाषाओं पर बढ़ता खतरा

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

उपसम्पादक
श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा (लखनऊ)
सुश्री इंदु सिंह "इन्दुश्री" (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुंतला कालरा	03
2	जीवन में अनुशासन का महत्व	श्रीमति सुषमा सागर मिश्रा	05
3	भारतीय ज्ञान परंपरा में आत्मिक....	डॉ. अजय शुक्ला	07
4	सरस्वती वंदना	ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र	09
5	गर्भस्थ शिशु को संस्कार दीजिए	डॉ. सन्तोष खन्ना	10
6	शारदे आराधना	डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'	11
7	यज्ञ एक वैज्ञानिक अभ्यास	सुजाता प्रसाद	12
8	जयति जयंती वीणापाणी	डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक	13
9	शहीद दिवस	श्रीमती शोभा रानी तिवारी	14
10	हारिए न हिम्मत, बिसारिए न राम	डॉ. साधना गुप्ता	15
11	मां मुझको जन्म लेने दो	अंकुर सिंह	17
12	भूमण्डलीकरण के दौर में....	आकांक्षा यादव	18
13	रैदास के आराध्य	डॉ. शकुंतला कालरा	22
14	महाशिवरात्रि पर विशेष	सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'	24
15	मैं भारत हूँ	डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'	25
16	प्रेम पर दोहे	व्यग्र पाण्डे	25
17	प्रकृति और खिलवाड़	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	26
18	वृद्धावस्था में सदैव सकारात्मक....	डॉ. शारदा मेहता	28
19	मातृ–भक्ति के प्रतीक शिवाजी	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	30
20	धरती के लाल शहीद....	सौम्या पाण्डेय 'पूर्ति'	31
21	आजादी के मतवाले	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	32
22	साइबर शोक	डॉ. अर्चना प्रकाश	33
23	खासी लोक कथाओं में नैतिकता	डॉ. अनीता पंडा	34
24	इतनी शक्ति दे गुरुवर	मधुबाला शांडिल्य	35

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

सभी साहित्यिक मित्रों को मेरा सादर अभिवादन।

ठिठुरती ठंड, तीर सा चुभता शीत पवन, धरती और आकाश को एक करते धुंध के आवरण के साथ शिशिर ऋतु विदा ले रही है। बसंत का शुभ आगमन हो गया है। हमारा देश ऋतुओं का देश है। इसमें छः ऋतुएं होती हैं- ग्रीष्म, पावस, शरद, शिशिर, हेमन्त और वसंत। प्रकृति की हर ऋतु की अपनी अपनी विशेषता है। वसंत ऋतु तो सबसे विशेष है। इसलिए इस को ऋतुराज कहते हैं। वसंत सदैव हमें नव-जीवन और नव-उल्लास देता है। वसंत ऋतुओं का शृंगार है। इसके आगमन पर डाल-डाल पर फूल खिलते हैं। क्यारियाँ रंग-बिरंगे सुन्दर-सुन्दर फूलों से भर जाती हैं। प्रकृति का यह सौंदर्य सबको खींचता है। वन-उपवन, बाग-बगीचे में आम्रमंजरी महक उठती है। खेतों में पीले-पीले सरसों के फूल खिलते हैं।" आम के पेड़ों पर बैठी कोयल गाती रहती है "जब वसंत ऋतु में आम के पेड़ पर बौर आती है तो ऐसा कहते हैं कि उसकी महक से यह उतावली होकर खिचीं चली आती है और ऐसे ही फिर अपनी मस्ती में गाती है। वसंत ऋतु में गहरे लाल रंग के पलाश के फूल खिलते हैं। ये वसंत ऋतु से प्रेम करते हैं। उसके आगमन की खुशी में इनके मन का अनुराग इस तरह चटक कर उसका स्वागत करता है।" इसे 'टेसू' भी कहते हैं। हमारे लोक साहित्य में इसके नाम पर 'टेसू गीत' भी हैं। ये शुद्ध मनोरंजन गीत होते हैं। इसका एक नाम 'ढाक' भी है जिसका प्रयोग अक्सर कहावत में होता है - 'ढाक के तीन पात'।" ढाक के वृक्ष की पूजा भी की जाती है। यज्ञ, हवन, पूजा-पाठ में पलाश के पत्तों, फूलों का प्रयोग किया जाता है।

वसंत का संबंध कला, संस्कृति, साहित्य और विद्या की देवी सरस्वती से है। इस दिन सरस्वती की पूजा की जाती है। कहा जाता है कि भगवान विष्णु की आज्ञा से प्रजापति ब्रह्मा जब सृष्टि की रचना करके पृथ्वी पर आए तो उन्होंने चारों ओर सुनसान और निर्जन वातावरण देखा। हर तरफ उदासी ही उदासी छाई हुई थी, जैसे किसी की वाणी ही न हो। उन्हें अच्छा नहीं लगा। उन्होंने अपने कमंडल से जल लेकर चारों ओर छिड़का। उन जल-कणों के वृक्षों पर पड़ते ही चार भुजाओं वाली शक्ति उत्पन्न हुई जो दो हाथों में वीणा धारण किए हुए

थी। ब्रह्मा जी ने उस देवी को वीणा बजाकर सृष्टि की उदासी दूर करने को कहा। उस देवी ने वीणा बजाकर सृष्टि की उदासी को दूर कर सभी जीवों को वाणी प्रदान की। इस देवी का नाम सरस्वती पड़ा। यह देवी विद्या और बुद्धि प्रदान करने वाली है।

इसी माह में आने वाला पहला पर्व रविदास जयंती है। स्वामी रामानंद के अग्रणी शिष्य संत रैदास की ख्याति ऐसे संत के रूप में है जो खण्डन-मण्डन से परे अपनी ही धुन में मस्त रहते थे। यह एक वैष्णव भक्त थे प्रेम में डूबकर निरंतर नाम-स्मरण ही इनकी साधना और भक्ति थी। जाति से चमार संत रैदास की वाणी का ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। इनकी भक्ति के आलंबन ब्रह्म के निर्गुण-सगुण उभय रूप हैं। निर्गुणोपासना के प्रखर प्रचारक संत कबीर इनके गुरु भाई थे, किंतु इन्होंने कबीर की तरह सगुण ब्रह्म का विरोध नहीं किया। उनके इष्ट अनंत सौंदर्य-युक्त अनंत शक्ति एवं अनंत शील से युक्त हैं। सगुण भक्तों की भाँति रविदास ठाकुर-पूजा करते थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि प्रस्तर के सालिग्राम में परमेश्वर निवास करता है।

महाशिवरात्रि का पर्व भी इसी महीने आ रहा है। फागुन मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को हर वर्ष की भाँति इस वर्ष भी महाशिवरात्रि आ रही है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार इस दिन माँ पार्वती और भगवान शिव का विवाह हुआ था।

वसंत का संदेश यानी नए जीवन, नए संकल्पों, नई राहों, नए विचारों, नई आशा का संदेश, यह प्रकृति पूरे विश्व को देती है। वसंत का उल्लास, वसंत की उत्सवधर्मिता, वसंत की जीवंतता आप सब तक पहुँचे और आप इन सभी त्योहारों को प्रसन्नतापूर्वक मनाएं। इसी मंगल कामना के साथ -

शकुंतला कालरा

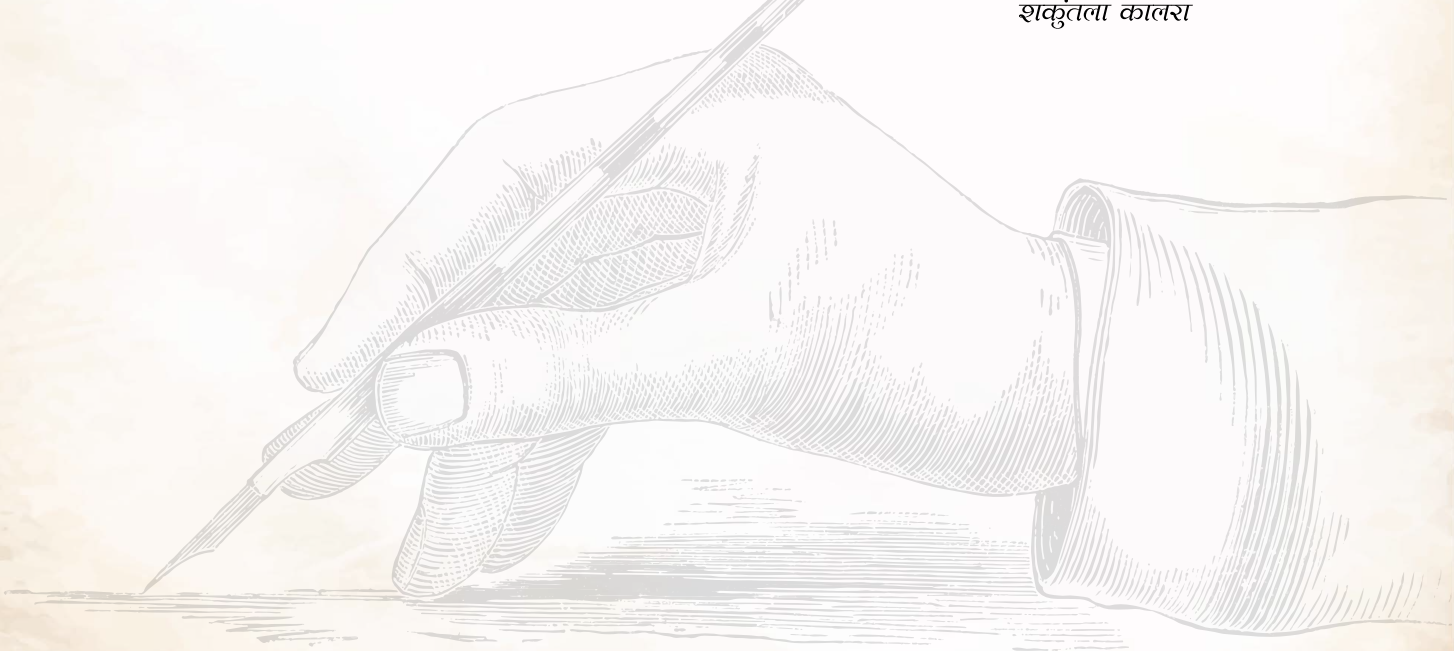

जीवन में अनुशासन का महत्व

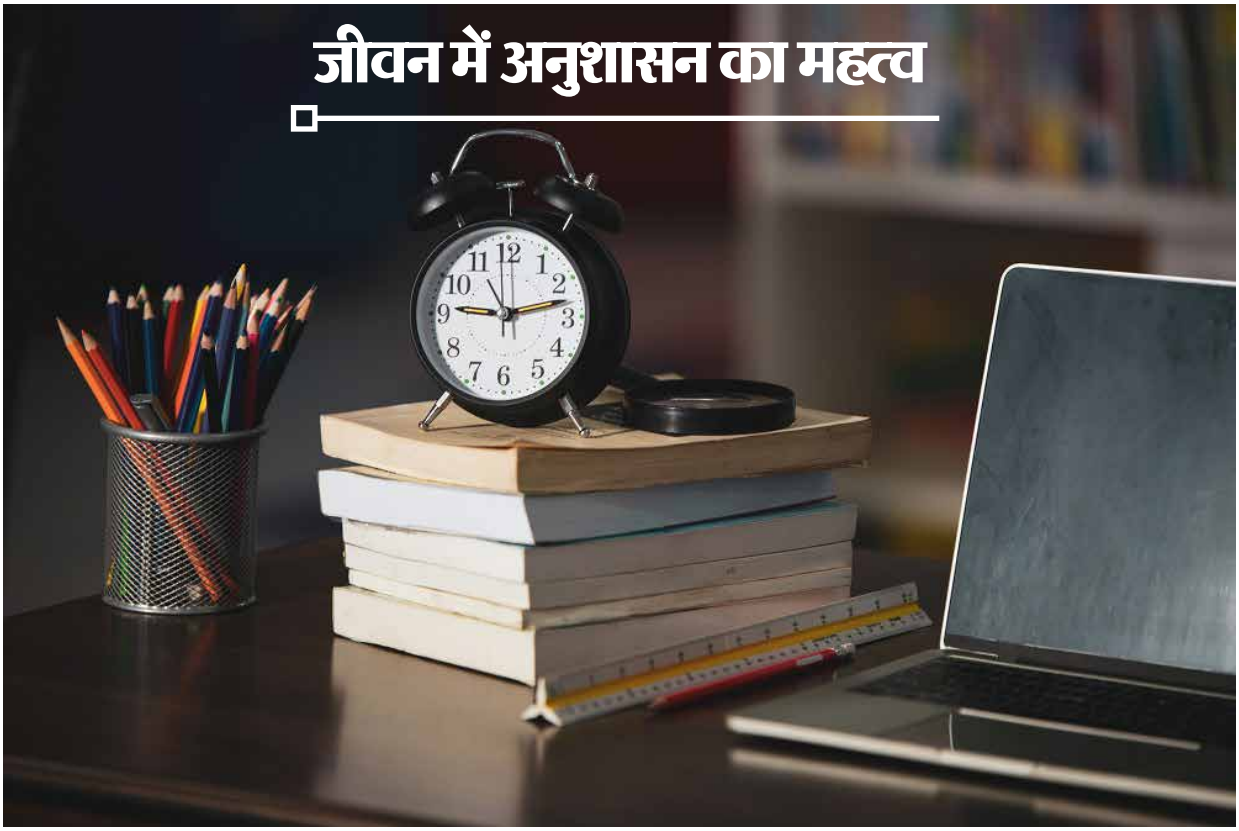

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय बालिका
विद्यालय, लखनऊ

मानव ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ कृति के रूप में जाना जाता है क्योंकि चरित्र बल, विवेकशीलता, कर्तव्यनिष्ठा एवं अनुशासन प्रियता जैसे गुण मानव में ही पाए जाते हैं। अनुशासन एक सद्‌गुण है, यह एक जीवन दर्शन है तथा सभ्य समाज की पहचान है। यह किसी कानून अथवा अंकुश से नहीं अपितु स्वेच्छा से स्वयं में जागृत होता है निसंदेह यह स्वाधीनता की स्थिति है। अनुशासन नियमों का परिमार्जित रूप है, जिसके पालन से मनुष्य में व्यवहारिकता आती है। यह एक संस्कार है जिसका निर्माण सामाजिक परिवेश में होता है। अनुशासन का दूसरा नाम मर्यादित आचरण अथवा दूसरों की सुख सुविधाओं का ध्यान रखते हुए शुभ आचरण करना ही अनुशासन है। स्वस्थ समाज के निर्माण हेतु अनुशासन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है इसी से मनुष्य श्रेष्ठता को प्राप्त कर समाज में उच्चतम एवं सफलतम स्थान प्राप्त कर सकता है। देश और समाज को सभ्य एवं उन्नत बनाने के लिए उनके नागरिकों का अनुशासित होना अत्यंत आवश्यक है यही उनका अपने देश के प्रति कर्तव्य भी है।

अनुशासन का शाब्दिक अर्थ है स्वयं का स्वयं पर शासन करना तथा उसी शासन के अनुसार अपने जीवन को चलाना। अनुशासित व्यक्ति का जीवन सामान्य व्यक्ति की अपेक्षाकृत सरल होता है क्योंकि उनमें निरन्तर धैर्य, विवेक एवं कार्य क्षमता का विकास होता रहता है परिणाम स्वरूप उनमें नेतृत्व की शक्ति जागृत होती है स्वयं में आत्मविश्वास जागृत होता है। सच पूछिए तो अनुशासन ही सफलता की चाबी है यूं तो अनुशासन की पहली पाठशाला घर होती है जहां बच्चे अपने माता पिता एवं घर के अन्य सदस्यों से जीवन जीने की कला सीखते हैं और दूसरी विद्यालय होती है जहां वे अपने शिक्षक एवं सहपाठियों से सीखते है। अनुशासन का पाठ घर से प्रारंभ होकर विद्यालयी शिक्षा तक निरंतर चलता रहता है जो कि जीवन की बहुमूल्य पल होते हैं, इसी समयान्तराल में अनुशासन का बीज बालक के हृदय में अंकुरित होने लगता है जो आगे बढ़कर धीरे–धीरे पल्लवित होकर पूर्ण वृक्ष बन कर एक

अनुशासित नागरिक के रूप में अपने परिवार, समाज एवं देश की सेवा में संलग्न होता है। सच्चाई तो यह है कि अनुशासन की शिक्षा किसी किताब से न मिल कर समाज से ही मिलती है, जब बड़े स्वयं अनुशासित होते हैं तो यही शिक्षा उनके बच्चों को भी मिलती है क्योंकि बच्चे सदैव अपने बड़ो को देखकर उनका अनुकरण करते हैं। विद्यालय में शिक्षा व्यवस्था और शिक्षक जितना ही अनुशासित होता है, छात्र के जीवन पर उसका उतना ही गहरा प्रभाव पड़ता है इसलिए एक अनुशासित परिवार, समाज एवं देश के निर्माण के लिए आवश्यक है कि हम बड़े स्वयं अनुशासन में रहकर उनके लिए प्रेरणा स्रोत बने और अपने देश को स्वस्थ, अनुशासित नागरिक दे कर उसे मजबूत एवं समृद्ध शाली बनाएं।

देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि 'अनुशासन राष्ट्र की का जीवन रक्त है'। सच पूछा जाए तो अनुशासन मानव सभ्यता की पहली सीढ़ी है जिसके सहारे मानव का क्रमिक विकास संभव हो पाया है इतिहास में अनेकों ऐसे उदाहरण हैं जहां अनुशासन में रहकर महत्वपूर्ण सफलताएं एवं उपलब्धियां हासिल हुई हैं जो कि हमारे समाज के लिए प्रेरणा की प्रबल स्तंभ बनी है।

हमारी प्रकृति अनुशासन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है, आकाश से पाताल तक सभी स्थानों पर अनुशासन का महत्व है। पशु–पक्षी, कीट–पतंगे, सूर्य–चंद्रमा, धरती और आकाश सभी अनुशासन में रहकर कार्य करते हैं। चीटियों का पंक्तिबद्ध हो कर चलना और पक्षियों का मालाकार ऊपर आकाश में उड़ना, हाथी का महावत के अंकुश के अनुसार कार्य करना देखकर अनुशासन की महत्ता का भान होता है। दिन–रात के क्रम, यथासंभव ऋतु परिवर्तन, सूर्य–चंद्रमा नक्षत्रों का अनुशासन में रहकर उदयास्त होना भी अनुशासन के महत्व को प्रदर्शित करता है। इसी भावना को जयशंकर प्रसाद जी ने इस प्रकार व्यक्त किया है–

सिर नीचा कर जिसकी सत्ता सब करते स्वीकार यहां।
मौन भाव से प्रवचन करते, जिसका वह अस्तित्व कहां।

आज के जीवन में आपाधापी बढ़ गई है लोग कम समय में अधिक सफलता प्राप्त कर लेना चाहते हैं जिसके लिए येन– केन– प्रकारेण ढंग से लक्ष्य के लिए दौड़ते रहते हैं और अनुशासनहीन होकर अपने लक्ष्य को शीघ्रतापूर्वक प्राप्त करने का प्रयास करते हैं जिसमें या तो वह पूरी तरह असफल हो जाते हैं या अल्प समय में ही अस्थाई सफलता प्राप्त कर पुनः असफलता के गर्त में गिर जाते हैं और अपना जीवन बर्बाद कर लेते हैं इसके विपरीत अनुशासित जीवन में धैर्यपूर्वक चलकर शांति के साथ आगे बढ़ कर धीरे–धीरे निरन्तर प्रयास से अपना लक्ष्य प्राप्त करते हैं जो कि स्थाई सफलता प्राप्त कर देश एवं समाज का नाम ऊंचा कर स्वयं को सब लोगों से श्रेष्ठतर श्रेणी में शामिल कर लेते हैं।

अनुशासन मुख्यतः दो प्रकार का होता है प्रथम आत्मानुशासन और दूसरा बाह्य अनुशासन। आत्मानुशासन का तात्पर्य बिना किसी बाहरी दबाव के अपनी आत्मा के अनुसार अनुशासित रहना जो कि सर्वश्रेष्ठ है, इसका पालन करने वाले जीवन को स्वयं से प्रेरणा लेकर अनुशासित करते हैं जिसके अन्तर्गत अपने सभी काम समय से पूर्ण करना, अपने अध्ययन एवं अपने स्वास्थ्य के प्रति सजग रहना, बड़ों का सम्मान एवं छोटों को प्यार करना शामिल है। अनुशासन सुखद एवं स्वस्थ जीवन के निर्माण की पहली सीढ़ी है क्योंकि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क रहता है। इसके विपरीत बाहरी अनुशासन में जीने वाला व्यक्ति दोहरा व्यवहार करता है वह सभ्य समाज में अथवा बड़ों के बीच तो बहुत अनुशासित रहता है परंतु जैसे ही ऊपर से सभी दबाव हट जाते हैं उसकी सोच और क्रियाकलाप अनुशासन हीन हो जाते हैं जो कि देश, समाज के लिए और स्वयं उसके लिए बहुत ही घातक है क्योंकि मानव को प्रत्येक कदम पर अनुशासित जीवन जीना चाहिए। वह व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक अथवा राष्ट्रीय जीवन में अनुशासित रहकर ही अपने जीवन में स्थायित्व ला सकते हैं तथा देश को उन्नति के पथ पर अग्रसर कर सकते हैं क्योंकि जिस देश के नागरिक जितने अनुशासित होंगे वह देश उतना ही मजबूत होगा एवं निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर होता रहेगा और सभी क्षेत्रों में वह आगे बढ़ता रहेगा।

अंत में मैं बस इतना कहूंगी कि अनुशासन एक अमूल्य पूंजी है जिसके बिना जीवन बिना पतवार की नाव के समान है जो कभी भी डूब सकती है। अनुशासन ही जीवन का सच्चा सार है एवं सफलता की कुंजी है, साथ ही चरित्र का आभूषण एवं राष्ट्र का गौरव है अतः जिस प्रकार हम अपने शरीर को सजाने के लिए आभूषणों से अलंकृत करते हैं उसी प्रकार हमें अपने बहुमूल्य जीवन को सजाने के लिए अनुशासन रुपी आभूषण से स्वयं को अलंकृत करना चाहिए। विश्वास मानिये कि जिस दिन हम स्वयं अनुशासित हो जाएंगे उस दिन से ही हमारा देश उन्नति के शिखर पर आसीन हो जाएगा। विश्व में पुनः विश्व गुरु के रूप में सदैव सम्मानीय रहेगा।

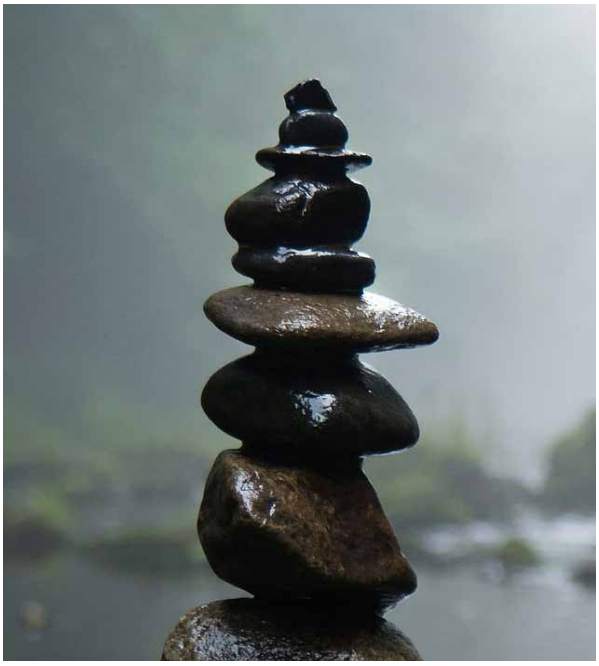

भारतीय ज्ञान परंपरा में आत्मिक परिवेश की पवित्र अनुभूति

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

'आध्यात्मिक अनुसंधान में सत्य दर्शन का रहस्योद्घाटन प्रामाणिक स्वरूप से होने के कारण, साधना के पथ पर गतिशील साधक के लिए आत्मानंद के सानिध्य में परिष्कृत आत्मचिंतन द्वारा उत्कृष्ट अवस्था की प्राप्ति का विशिष्ट रूप से प्रेरणादाई आधार बनता है जिससे आत्मिक आश्रय से मौन साधना का मार्ग स्वमेव ही प्रशस्त होता है। आध्यात्मिक परिदृश्य की समग्रता में आत्मिक अध्ययन एवं पुरुषार्थ अनुसंधान की व्यापक परिधि, शैक्षणिक प्रशिक्षण द्वारा आत्म दर्शन को सुनिश्चित कर देती है जिससे पारदर्शी जीवन तथा यथार्थवादी स्वरूप का सामाजिक परिदृश्य मंगलकारी रूप में प्रखरता से मुखरित हो जाता है।

स्वयं को सदा निमित्त, निर्माण और निर्मल स्वरूप में स्थापित करते हुए लौकिक, अलौकिक एवं पारलौकिक सत्ता के प्रति श्रद्धा, आस्था तथा मान्यता के साथ उपदेश के अनुपालन में आज्ञाकारिता एवं धर्मगत आदेश को आत्मसात करके ईश्वरी तत्व बोध तथा निजी अस्तित्व की स्वीकारोक्ति को सुनिश्चित किया जा सकता है। जीवन में उच्चतम स्थितियों से महानतम अवस्था की प्राप्ति धर्मगत आचरण की कर्मगत शुचिता से ही निर्धारित होती है जिसके परिष्कार हेतु महान जीवन की स्थापना एवं पवित्र आत्मिक स्वरूप को स्थाई रूप से साधने के लिए आध्यात्मिक परिदृश्य में उपराम स्थिति से कर्मातीत अवस्था तथा अव्यक्त स्वरूप के फलितार्थ द्वारा सुनिश्चित होता है।

मति और सुमति के माध्यम से आत्मिक पवित्रता के प्रकंपन को चहुं दिशाओं अर्थात संपूर्ण आभामंडल को खुशबूदार बनाते हुए मानवतावादी चिंतन में अंतर्मन द्वारा' सर्वे भवंतु सुखिनः ...' की व्यापकता को स्वीकार करके अध्यात्मवादी चौतन्यता की भावनात्मक सृष्टि से ' वसुधैव कुटुंबकम ... ' की विराट उच्चता पर आत्म तत्व को चेतना के उच्च दर्शन से पुनर्स्थापित किया जा सकता है। मनुष्य जन्म की प्राप्ति के पश्चात सनातन धर्म की सभ्यता एवं संस्कृति का समग्र परिदृश्य 'बड़े भाग्य मानुष तन पावा ...' की उच्चता के सानिध्य में

गतिशील जीवन की महानता को प्राप्त करने हेतु अव्यक्त स्वरूप में पवित्र आचरण द्वारा उदाहरणमूर्त चेतनता के रूप में परिवर्तित हो जाता है जो सर्वगुण संपन्नता के फरिश्ता स्वरूप से साक्षात्कारमूर्त चेतनता की संपूर्णता को सदा ही आत्मिक समृद्धि के स्वरूप में प्रकट करता रहता है।'

आध्यात्मिक अनुसंधान द्वारा सत्य दर्शन का प्रमाण : जीवन में आत्मिक समृद्धि की अनुभूति हेतु आध्यात्मिक अनुसंधान द्वारा सत्य दर्शन की अनुभूति होती है जिससे संवेदनशील दृष्टिकोण के निर्माण में अंतर्मन के महत्वपूर्ण योगदान को स्वीकार करते हुए अंतःकरण की ध्वनि से प्रेरणादाई जीवन की व्यवहारिकता को निर्भय होकर निभाया जा सकता है । चेतना के परिष्कार में पारदर्शी पुरुषार्थ की विशिष्ट भूमिका नैसर्गिक अंतर्दृष्टि द्वारा आत्मिक स्वतंत्रता का गतिशील प्रभुत्व निर्मित कर देती है जिससे जीवन के आचरण पक्ष में 'अहिंसा परमो धर्मः ...' का आत्मगत उत्कर्ष हेतु जयघोष किया जाना व्यावहारिक दृष्टि से संभव हो जाता है।

जीवात्मा द्वारा आत्मिक अनुसंधान के माध्यम से आत्म हित के रहस्य को जब पूर्णतः आत्मसात कर लिया जाता है तब पवित्र भावना एवं विचारगत उच्चता द्वारा बेहतर जीवन की ओर अग्रसर होने के लिए पुरुषार्थ तीव्र हो जाता है जिसमें आत्मिक कल्याणकारी स्थिति द्वारा श्रेष्ठ जीवन की उपलब्धि समाहित रहती है। आध्यात्मिक अनुसंधान में सत्य दर्शन का रहस्योद्घाटन प्रामाणिक स्वरूप से होने के कारण , साधना के पथ पर गतिशील साधक के लिए आत्मानंद के सानिध्य में परिष्कृत आत्मचिंतन द्वारा उत्कृष्ट अवस्था की प्राप्ति का विशिष्ट रूप से प्रेरणादाई आधार बनता है जिससे आत्मिक आश्रय से मौन साधना का मार्ग स्वमेव ही प्रशस्त हो जाता है।

आध्यात्मिक परिदृश्य में आत्म दर्शन की समग्रता : आध्यात्मिक अनुसंधान की प्रक्रिया में शिक्षा एवं दीक्षा की व्यवहारगत गतिशीलता आत्मा के अध्ययन की ओर व्यक्ति को अभिप्रेरित करती है जिससे सकारात्मक और सार्थक जीवन ढूंढने का शुभ भाव निर्मित होता है और जीवात्मा संपूर्ण एवं समर्पित अवस्था हेतु सहज ही आत्मिक प्रतिबद्धता को अंतर्मन से स्वीकार कर लेती है। जीवात्मा स्वयं की अनुभूति के लिए आत्मिक अध्ययन से संबंधित शिक्षण एवं प्रशिक्षण का अनुगमन करके आत्म तत्व को पुण्यात्मा तथा देवात्मा के निर्माण में नैसर्गिक श्रद्धा से संबद्ध होकर पुरुषार्थ में संलग्न हो जाती है जिससे आत्मानुभूति और परमात्मानुभूति के अनहद आनंद का स्थायित्व जीवन में पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

चेतना के परिष्कार की सात्विकता का आत्म साक्षात्कार होने पर जीवन मूल्य एवं अध्यात्म दर्शन का उत्तरदायित्वपूर्ण बोध सुनिश्चित हो जाता है जिससे आत्म हित साधने के साथ सामाजिक उत्थान तथा मनोवैज्ञानिक संदर्भ की व्यवहारिक विवेचना करना न्याय संगत हो जाता है। आत्मगत अध्ययन के विविध स्वरूप में मनुष्य जीवन की सौभाग्यशाली परंपरा का दार्शनिक सिद्धांत और आध्यात्मिक प्रसंग की संवेदनशील अभिव्यक्ति मानवतावादी चिंतन का चौतन्यता से युक्त संबोधन है जो आत्म तत्व के व्यवहारिक क्रियान्वयन एवं प्रेरणात्मक जुड़ाव का पवित्र पक्ष होता है।

आत्मगत अस्तित्व द्वारा परमात्म दर्शन का स्वरूप : जीवात्मा द्वारा स्वयं की खोज हेतु भागीरथ पुरुषार्थ की पराकाष्ठा तक पहुंचने के लिए चेतना को निरंतर रूप से अनेकानेक प्रयत्न और विशेष जतन करना होता है तब महान जीवन और सकारात्मक अभिप्रेरणा की दिव्य अनुभूति संभव हो पाती है जिसमें आत्मिक समृद्धि एवं जीवन की दुर्लभता का बोध नैसर्गिक रूप से सन्निहित रहता है। स्वयं के विकासात्मक पक्ष के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण का निर्माण करते हुए अग्रसर रहने की आत्मिक प्रवृत्ति एवं प्रकृति के सुखद परिणाम विकसित जीवन का स्वरूप तथा आध्यात्मिक मूल्य संपन्नता की प्राप्ति है जिससे मानव जीवन में व्यक्तिगत उन्नति और विकास का मार्ग पुण्य की परिणति के रूप में प्रशस्त हो जाता है।

आत्मा के संबंध में सूक्ष्म अध्ययन का अनुगमन ही चेतना को आत्मिक विकास हेतु दिव्य गुण तथा महान चिंतन के प्रति निष्ठावान बनाता है जिसमें राजयोग शक्ति से आंतरिक खोज और आत्म अनुभूति की विराटता को जीवन में स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है । स्वयं को सदा निमित्त , निर्माण और निर्मल स्वरूप में स्थापित करते हुए लौकिक, अलौकिक एवं पारलौकिक सत्ता के प्रति श्रद्धा, आस्था तथा मान्यता के साथ उपदेश के अनुपालन में आज्ञाकारिता एवं धर्मगत आदेश को आत्मसात करके ईश्वरी तत्व बोध तथा निजी अस्तित्व की स्वीकारोक्ति को सुनिश्चित किया जा सकता है।

समृद्ध परंपरा द्वारा व्यवहार दर्शन का अनुष्ठान : आत्मा की समृद्धशाली परंपरा का निर्वहन सदा ही अध्यात्म की शक्ति से अनुप्राणित होता है जो व्यवहार दर्शन के माध्यम से आध्यात्मिक जगत में वैज्ञानिक दृष्टिकोण से नैसर्गिक अभिप्रेरणा के स्वरूप में परिलक्षित होकर सर्व आत्माओं को आत्मगत स्वमान, स्वरूप एवं स्वभाव की नैसर्गिक अनुभूति करा देता है जिससे मानव जीवन में आत्म समृद्धि द्वारा उच्च आयाम को सहजता से प्राप्त किया जा सकता है। मानव जीवन में सैद्धांतिक परिदृश्य का वास्तविक परिवेश क्रियान्वित होने से चेतना की संतुष्टता आत्म परिष्कार में अनिवार्य परिवर्तन से व्यावहारिक परिणाम को प्राप्त कर लेती है जिससे ज्ञान बोध में सत्य दर्शन द्वारा आत्मिक संपन्नता का सिद्ध स्वरूप जीवात्मा के लिए 'बड़े भाग्य मानुष तन पावा ...' के रूप में उद्घाटित हो जाता है।

आत्मगत उच्चता की अभिलाषा में जीवन पर्यंत साधक द्वारा साधना के पथ पर अग्रसर रहकर साध्य तक पहुंचने के लिए पवित्र साधन का ही प्रयोग किया जाना मंगलकारी समृद्धि में उच्च दर्शन से रूपांतरित देवात्मा के प्रतिबिंब का दुर्लभ परिणाम है जो चिंतनशील चेतना में प्रेरणात्मक अभिव्यक्ति द्वारा सृजनात्मक समाधान की महान परिणीति के माध्यम से प्रस्फुटित होता है। मूल्यगत आचरण के आचार्य की धारणात्मक श्रेष्ठता के प्रति श्रद्धा, आस्था एवं मान्यता की नैसर्गिक पक्षधरता सदा मानव जाति को 'मातृ देवो भवः, पितृ देवो भवः, आचार्य देवो भवः, सत्यं वद, एवं धर्म चर ...' के मार्ग पर गतिशील बने रहने के लिए प्रेरित करती है जिसमें मूल्यपरक जीवन में व्यवहारगत सिद्धांत से मर्यादित

आचरण का नैतिक संबल अंतर्मन को 'चरैवेति ... चरैवेति ...' के नैसर्गिक व्यवहार को आत्मसात करने हेतु मार्गदर्शन प्रदान करता है जिससे आध्यात्मिक अनुसंधान द्वारा शैक्षणिक क्रियाविधि के अंतर्गत प्रशिक्षण से आत्मिक अध्ययन का विराट अनुष्ठान आत्मिक अनुकरण और अनुसरण का महत्वपूर्ण स्रोत बन जाता है।

आत्मिक पवित्रता में उच्च दर्शन की चौतन्यता : मानव जीवन में उच्चता की ओर अग्रसर होने की मूलभूत प्रवृत्ति से संबंधित वास्तविक प्रकृति सदा आत्मगत स्वभाव में सात्विक सुमति द्वारा ' नियम– संयम ' से संचालित होती रहती है जिसमें नैसर्गिक परिदृश्य की गहन साधना से ' जप– तप ' के प्रति अंतःकरण से जुड़ाव का पवित्र स्वरूप स्वयं को अनुशासित बनाए रखने में मददगार सिद्ध होता है । स्वयं को जानने की अभिलाषा व्यक्तिगत पुरुषार्थ में एक नवीन आयाम को स्थापित करते हुए जब गतिशील होती है तब आत्मिक स्वरूप में एकाग्र चित्त द्वारा 'ध्यान धारणा' की दिशा में अनुगमन सुनिश्चित हो जाता है और चेतना की चेतनता से युक्त पक्ष जिज्ञासु प्रवृत्ति की आंतरिक उत्कंठा से ' स्वाध्याय– सत्य' की प्राप्ति में श्रद्धा पूर्वक संबद्ध होकर समर्पित हो जाते हैं।

जीवन में प्रार्थना और साधना की शक्ति से भाव एवं विचार जगत के सानिध्य में आत्म जगत को भी महत्ता प्रदान की जाती है जिससे ज्ञानेंद्रियों एवं कर्मेंद्रियों का विशिष्ट योगदान समाजवादी अवधारणा में संतुष्टि द्वारा 'सर्व धर्म समभाव ... ' के स्वरूप को अनुभव करते हुए साम्यवादी विचारधारा की व्यावहारिक पृष्ठभूमि से ' सर्व जन हिताय ... ' की संकल्पना को पूर्णता प्रदान किया जाता है। श्रेष्ठतम गति , मति और सुमति के माध्यम से आत्मिक पवित्रता के प्रकंपन को चहुं दिशाओं अर्थात संपूर्ण आभामंडल को खुशबूदार बनाते हुए मानवतावादी चिंतन में अंतर्मन द्वारा ' सर्वे भवंतु सुखिन ...' की व्यापकता को स्वीकार करके अध्यात्मवादी चौतन्यता की भावनात्मक सृष्टि से ' वसुधैव कुटुंबकम .... ' की विराट उच्चता पर आत्म तत्व को चेतना के उच्च दर्शन से पुनर्स्थापित किया जा सकता है।

संपूर्ण समर्पण द्वारा सर्वोच्च दर्शन का साक्षात्कार : आत्मिक पवित्रता की उच्चतम स्थिति से युक्त जीवन के परिवेश में विशाल हृदय एवं विराट मस्तिष्क के भावनात्मक और वैचारिक पक्ष की श्रेष्ठता से आध्यात्मिक परिदृश्य में संपूर्ण– समर्पण द्वारा सर्वगुण– संपन्नता की महानतम उपलब्धि प्राप्त होती है जिसमें चिंतनशील चेतना के गतिशील स्वरूप से आत्मगत सर्वोच्चता के शिखर पर पहुंचना सुनिश्चित हो जाता है । मानव जाति जब आत्मशक्ति को स्वीकार कर लेती है तब स्वयं की दृष्टि को विकसित करना संभव हो जाता है और व्यक्ति ' दृष्टि बदलने से सृष्टि बदलने ...' के गूढ़तम रहस्य को आत्मसात करके ' जीवन– लक्ष्य ' के अंतर्गत ' उमंग– उत्साह ' द्वारा ' दृष्टिगत – महानता ' के संदर्भ और प्रसंग से पुरुषार्थ की गतिशीलता में अभिवृद्धि करके धारणात्मक उच्चता के ज्ञान– योग से धर्मगत सेवा– भाव को पूर्णतया अंगीकार करना आत्मगत समर्पण का जीवंत उदाहरण बन जाता है।

आत्मानुभूति के केंद्र में स्वयं को स्थापित कर देने पर निर्धारित मनोदशा से अपेक्षित– परिवर्तन, परिणाम, परिमार्जन, परिवर्धन एवं परिष्कार की संभावनाएं बढ़ जाती है जिससे उपराम स्थिति में आदि स्वरूप द्वारा– उद्धारमूर्त चेतनता की अभिव्यक्ति सुनिश्चित हो जाती है जो कर्मातीत अवस्था के पूज्य स्वरूप में अनुभवीमूर्त चेतनता, प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मंगलकारी और वरदानी आशीष प्रदान करते हुए प्रस्फुटित हो जाती है। मनुष्य जन्म की प्राप्ति के पश्चात सनातन धर्म की सभ्यता एवं संस्कृति का समग्र परिदृश्य ' बड़े भाग्य मानुष तन पावा ...' की उच्चता के सानिध्य में गतिशील जीवन की महानता को प्राप्त करने हेतु अव्यक्त स्वरूप में पवित्र आचरण द्वारा उदाहरणमूर्त चेतनता के रूप में परिवर्तित हो जाता है जो सर्वगुण – संपन्नता के फरिश्ता स्वरूप से साक्षात्कारमूर्त चेतनता की संपूर्णता को सदा ही आत्मिक समृद्धि के स्वरूप में प्रकट करता रहता है।

सरस्वती वंदना

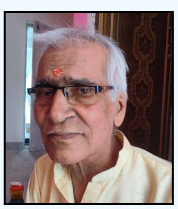

ब्रह्मेश्वर नाथ मिश्र
आरा, भोजपुर
बिहार

हे हंसवाहिनि वीणापाणी, मातु सुरसति शारदे ।
बिनती हमारी मातु तोसे, शरण आयो तार दे ।।
हे हंसवाहिनि वीणापाणी.....
हे विद्यादायिनि जगत जननी, शुभ्रवस्त्रा ज्ञान दे ।
बागेश्वरी सर्वेश्वरी, मातेश्वरी वरदान दे ।।
हे हंसवाहिनि वीणापाणी.....
अज्ञान हारिनि जगत तारिनि, सप्तसुर और तान दे ।
विद्या विवेक विनय प्रभृति, निज चरन में स्थान दे ।।
हे हंसवाहिनि वीणापाणी.....

गर्भस्थ शिशु को संस्कार दीजिए

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

आजकल प्रायः देखा जा रहा है कि बच्चों के पालन पोषण में उनके शरीर के विकास पर बहुत ध्यान दिया जाता है, उनके मानसिक और व्यक्तित्व विकास में उन्हें अच्छे संस्कार देने का भी बहुत महत्व है परंतु इस और इतना अधिक ध्यान नहीं दिया जा रहा है। देश की शिक्षा पद्धति और स्कूलों के वातावरण में बच्चे अच्छे इंसान कम 'बुल्ली' अधिक बन रहे हैं और इधर बच्चों में अपराध की प्रवृत्ति बहुत बढ़ती जा रही है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं परंतु सबसे महत्वपूर्ण कारण है आज के बच्चों में संस्कारों की कमी। बाजारवाद और उपभोक्तावाद का बोलाबाला इतना है कि आज समाज में नैतिक और मानव मूल्यों का ह्रास हो रहा है बच्चों को संस्कार की तो बहुत कम बात होती है।

जब शिशु गर्भस्थ होता है उसके जन्म लेने से पहले ही उसका मस्तिष्क मां के मस्तिष्क से जुड़ जाता है। चिकित्सा विज्ञान यह स्वीकार कर चुका है कि गर्भस्थ शिशु किसी चेतन्य जीव की तरह व्यवहार करता है । वास्तव में बच्चों को स्वस्थ संस्कार देने की प्रक्रिया गर्भस्थ अवस्था से ही आरंभ हो जानी चाहिए । गर्भस्थ शिशु माता के माध्यम से सुन –समझ सकता है और ग्रहण भी कर सकता है और उसके अनुसार अपनी प्रक्रिया भी व्यक्त कर सकता है। जिन गर्भवती माताओं ने अपने गर्भस्थ शिशु की हरकतों पर बारीकी से ध्यान दिया हो तो उन्हें इस बात का स्पष्ट भान होता है कि गर्भस्थ शिशु पर मां की मानसिक स्थिति का, उसके तनाव का, उसकी खुशी आदि का बहुत प्रभाव पड़ता है । आज तो चिकित्सा विज्ञान का यह उदाहरण भी सामने आया है कि यदि गर्भवती महिला की सोनोग्राफी के दौरान उसे सूई चुभोई जाती है तो गर्भस्थ शिशु भी तड़प उठता है।

गर्भवती महिलाओं को बड़े बूढ़े यह ज्ञान देते हैं कि गर्भ अवस्था में क्रोध मत करो, तनाव मत करो, प्रसन्न रहो क्योंकि तुम्हारे अंदर ईश्वर की सबसे अद्भुत बहुमूल्य देन शिशु पल रहा है। इस संदर्भ में महाभारत में आए इस प्रसंग से लगभग सभी लोग तो परिचित होंगे ही कि अर्जुन ने अपनी पत्नी सुभद्रा को चक्रव्यूह की जानकारी दी थी और गर्भस्थ शिशु के रूप में गर्भस्थ शिशु अभिमन्यु ने उसे सीख लिया था । यह दूसरी बात है कि यह सीख उसकी अधूरी रह गई थी। अभिमन्यु केवल चक्रव्यूह के भेदने की विधि जान पाया था उससे बाहर आने की नहीं क्योंकि कहते हैं कि इस बीच सुभद्रा को नींद आ गई थी। इस तरह की और भी पौराणिक कथाएं प्रचलित हैं। जैन धर्म में गर्भस्थ शिशु महावीर के बारे में भी भद्रबाहु स्वामी जी ने कल्पसूत्र नामक ग्रंथ में वर्णन किया है और तो और, बाइबिल में भी इसी तरह का एक प्रसंग आता है। बाइबिल में मरियम और अलिशिबा के बीच में संवाद हुआ था जिसमें गर्भवती मरियम को गर्भवती अलिशिबा बताती है कि उसके गर्भ में दिव्य शिशु के अस्तित्व

को महसूस कर मेरे गर्भ का शिशु आनंद से उछल रहा है । इस उदाहरण से गर्भस्थ शिशु की सजीवता और संवेदनशीलता स्पष्ट होती है और इस बात का महत्व समझा जा सकता है कि गर्भस्थ शिशु के प्रति मां–बाप और समाज की कितनी बड़ी जिम्मेदारी है।

सनातन धर्म में संतति जनन की बातों पर बहुत महत्व दिया जाता है। संतति जनन के लिए सबसे पहले तो माता–पिता को ही संस्कारवान होना होगा । संतति प्रजनन व्यक्तिगत मनोरंजन नहीं वरना सामाजिक उत्तरदायित्व है। वर्तमान में इस बात पर कोई अधिक ध्यान नहीं देता है। हमारे यहां तो कहा गया है :

जननी जने तो भक्त जन, कां दाता या शूर अर्थात्

'हे जननी, यदि तुम्हें संतान को जन्म देना है तो आस्थावान, कल्याणकारी या शौर्यशाली संतान को ही जन्म देना।

बच्चे देश का भविष्य और माता–पिता की संपदा और मान सम्मान होते हैं। वैसे तो सनातन धर्म में गर्भस्थ शिशु के विकास के साथ कई प्रकार के संस्कारों का वर्णन है आज के जीवन की आपाधापी में इन संस्कारों के लिए ना तो किसी में धैर्य बचा है और ना ही समय होता है परंतु संस्कारों से तेजस्वी, मेधावी और कर्मशील संतानों का निर्माण किया जा सकता है। कहा जाता है गर्भस्थ शिशु के दिमाग का विकास 3 से 7 माह के भीतर तेजी से होता है, शोध से भी पता चलता है कि गर्भावस्था के दौरान मां कोई सकारात्मक क्रिया करती है इससे खुशी देने वाले हार्मोन शरीर में बढ़ जाते हैं। मंत्र उच्चारण से, संगीत सुनने, ध्यान करने जैसी क्रियाओं से बच्चे के दिमाग का सक्रिय विकास होता है। वैसे तो बच्चों का हर आयु में संस्कारों के साथ पालन पोषण होना चाहिए परंतु वास्तव में यह प्रक्रिया तो संतान जन्म की प्लानिंग से ही शुरू हो जानी चाहिए। किंतु क्या आज की शिक्षित महिलाएं भी इस बात से परिचित होती है कि उन्हें इस महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व के चरण में प्रवेश से पहले ही अपनी सोच और संवेदनशीलता को साकार बनाना चाहिए और उस समय विशेष में स्वयं को स्वस्थ, प्रसन्न और संतुष्ट रखना चाहिए और गर्भावस्था में भी इसी मनःस्थिति को बना कर रखते हुए पोष्टिक आहार खाना चाहिए औरअपना आचरण भी शुद्ध रखना चाहिए। अतः स्वस्थ, संवेदनशील और संतान के लिए गर्भ संस्कार गर्भाधान से पहले से आरम्भ हो जाते हैं। गर्भस्थ शिशु जैसे जैसे विकसित हो अपनी उपस्थिति दर्ज कराने लगता है मां को उसके प्रति क्रमशः सजग होते जाना चाहिए। गर्भ संस्कार सही अर्थों में गर्भस्थ शिशु के साथ माता का स्वस्थ संवाद है अर्थात् उन दिनों मां की वैचारिकता शिशु को ऐसे प्रभावित करेगी कि वह उसके समूचे जीवन की प्रवृत्ति बन जायेगी। अतः मां को उन दिनों न केवल अपने खान पान पर ध्यान देना होता है बल्कि अपने उठने बैठने, चलने फिरने,समय पर सोने और जागने आदि के बारे में सर्तकता बरतने की जरूरत है। साथ ही कलह क्लेष से, राग द्वेष से और मिथ्या कथन और मिथ्या आचरण से बचना चाहिए। आप कहेंगे कि क्या वह साधु हो जाये?

नहीं, पर सच यही है कि संतित जनन त्याग और तपस्या की मांग करता है और अंत में प्रसव वेदना के कठिन बीहड़ के बाद जब इस तपस्या का फलागम ममता की झोली में आता है तो अनन्य और अनकहे आनन्द की अनुभूति अनिवर्चनीय होती है, जैसे प्रसव वेदना का घनीभूत अहसास वर्णनातीत है उसे केवल प्रसव से गुजरती मां ही जानती है वैसे शिशु के जन्म का अनिवर्चनीय आनन्द है।

विश्व प्रसिद्ध भारतीय कवियित्री डा कीर्ति काले ने गर्भस्थ शिशु के प्रति जिम्मेदारी को रेखांकित करते हुए लिखाः–

'जो आधुनिकाएँ बच्चे के जन्म को केवल शारीरिक क्रिया मानकर गर्भ संस्कारों जैसी पुरातन मान्यताओं का मजाक उड़ाती हैं उनसे कहना चाहती हूँ कि बेशक आपने बच्चे को जन्म तो दिया लेकिन क्षमा कीजिए आप भौतिक आधुनिकता के चक्कर में ईश्वर द्वारा स्त्री को विशेष रूप से प्रदान किए गए सृजन करने के इस अद्‌भुत आनन्द की अनुभूति से वंचित रह गई।'

इस संदर्भ में शिक्षित परंतु कामकाज होने के कारण अति व्यस्त महिलाओं से दो शब्द परामर्श में यह कहना अनुचित न होगा कि जीवन के सभी कार्यों में अगर कुछ महत्वपूर्ण है तो वह है संतित जनन, जो केवल महिलाओं को वरदान स्वरूप मिला है, उसे सही समय और सही भावना के साथ निभायें, यहीं समाज सेवा है,देश भक्ति है राष्ट्र भक्ति है और ईश्वर की भक्ति भी यही है। अवतारों को भी नारी ही जनती है।

शारदे आराधना

डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'
सेवानिवृत्त प्रधानचार्य
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

वीणा पाणिशारदे मां हंस पर हो सवार,
कर मध्य वीणा लिए द्वार पर आओ मां।
सा रे गा मा पा धा नि सा सरगम वाले स्वर,
वीणा से निकालकर हमको सुनाओ मां।
आपकी ही साधना में लीन रहता हूँ मातु,
'सागर' से कालजयी रचना लिखाओ मां।
ओज वाली कविताएं पढ़ूं जब मंच पर,
पीठ पर हांथ फेर हौसला बढ़ाओ मां।।

यज्ञ एक वैज्ञानिक अभ्यास

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

सृष्टि के आदिकाल से प्रचलित सबसे पुरानी पूजा पद्धति है यज्ञ। हमारी संस्कृति में प्राचीन समय से ही वेदों में यज्ञ का वर्णन मिलता है जिसे सुखी शांतिपूर्ण जीवन का मार्ग माना जाता है। यज्ञ एक अत्यंत ही प्राचीन पद्धति है, जिसे देश के साधु संतों और ऋषि–मुनियों ने समय–समय पर लोक कल्याण के लिए भी यज्ञ का आयोजन किया है।

एक बहुत ही अच्छा प्रसंग है जिसके माध्यम से यह बताया गया है कि दूध को मथने से उसमें उपस्थित जल और घी अलग अलग हो जाते हैं, और जब घी को अग्नि में डाला जाता है तो अग्नि उसे प्रकाश में परिवर्तित कर देती है। प्रसंग का सार यह है कि दूध एवं घी क्रमशः अनुभव और ज्ञान के प्रतीक हैं और अग्नि एवं प्रकाश, विवेक और सत्य के प्रतीक, और इन सभी के सामंजस्य का प्रतीक है यज्ञ।

दरअसल यज्ञ एक वैज्ञानिक अभ्यास है जिसे आज के दौर में भी अपनाए जाने की जरूरत है। अपनी परंपरागत जीवन शैली को भूल चुका हमारा समाज यज्ञ जैसे अग्नि अनुष्ठान को आडंबर की संज्ञा देने लगा। आज हम ये भूल गए कि हवन कुंड से निकलते अग्नि के ताप हमारे शरीर और दिमाग के लिए लाभदायक होते हैं। इससे उठने वाला धुआं कीटाणु और विषाणु नाशक होता है। एक विशेष अवधि के लिए अग्नि के सामने बैठने से शरीर के विषाक्त पदार्थ निकल जाते हैं। अग्नि की लपटों और मंत्रोच्चार से जो कंपन उत्पन्न होते हैं, ब्रह्माण्ड में जाने के बाद वापस हमारे पास आते हैं जो मानव शरीर को साफ करने में मददगार होते हैं।

इस प्रकार यज्ञ जीवन के सभी पहलुओं में शांति और समृद्धि लाने के साथ चिकित्सा पद्धति का भी एक हिस्सा है। जिसकी सत्यता बीते कोरोना काल में भी प्रमाणित हो गई। वैश्विक महामारी के उस गहन अन्धकार में व्यक्तिगत रूप से किया गया हर यज्ञ फलिभूत हुआ। आज के परिप्रेश्य में भी यज्ञ का महत्त्व उजागर हुआ। आशा और विश्वास का प्रकाश प्रज्ज्वलित हुआ, क्योंकि यज्ञ में उच्चरित मंत्रों से हमारे आसपास का वातावरण शुद्ध होता है ऐसा होने से मन और शरीर से नकारात्मकता दूर होती है। हम जानते ही हैं कि जब नकारात्मकता दूर होती है तो हमारी मानसिक स्थिति मजबूत होती है और फिर कई समस्याओं के समाधान पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

भगवद्गीता में कहा गया है यज्ञ एक 'जीवनदर्शन' है। 'यज्ञ' शब्द भगवद्गीता में बहुत महत्वपूर्ण है। यज्ञ के तीन अर्थ होते हैं दान, संगतिकरण और देवपूजन, जिनके व्यापक अर्थ भगवद्गीता में मिलते हैं। भारत के वेद शास्त्र यह दर्शाते हैं कि जीवन के सिद्धांत में किसी न किसी प्रकार का यज्ञ समाविष्ट रहता है। हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण एक यज्ञ है जिसे हमें उच्चता की पूर्ति की दिशा में करते रहना चाहिए, क्योंकि यज्ञ एक लाभकारी पद्धति है। देव भाषा संस्कृत में कहा गया है कि सतत् कर्म करना ही यज्ञ कहलाता है। अनासक्त होकर किया हुआ कोई भी कर्म, यज्ञ है। जैसे सभी पंच भूत तत्व पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु अपने अपने यज्ञ में स्थित हैं। उनमें से सूर्य का निरंतर प्रकाश फैलाना सूर्य का यज्ञ है। वैसे ही वनस्पतियों द्वारा ऑक्सीजन देना, फल फूल और छाया देना वनस्पतियों का यज्ञ है।

निस्संदेह मानव जीवन के कल्याण के लिए यज्ञ एक महत्त्वपूर्ण पद्धति है, एक विशिष्ट वैज्ञानिक और आध्यात्मिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने शरीर को स्वस्थ रख सकता है, जीवन को सफल बना सकता है।

इस प्रकार यज्ञ के जरिये आध्यात्मिक संपदा की भी प्राप्ति होती है। स्पष्ट रुप से हम कह सकते हैं कि यज्ञ का अर्थ है– सत्कर्म, यज्ञ का अर्थ है शुभ कर्म, यज्ञ का अर्थ है श्रेष्ठ कर्म अर्थात वेदों के अनुसार किया गया कर्म। यज्ञ की महिमा आज भी यथावत है।

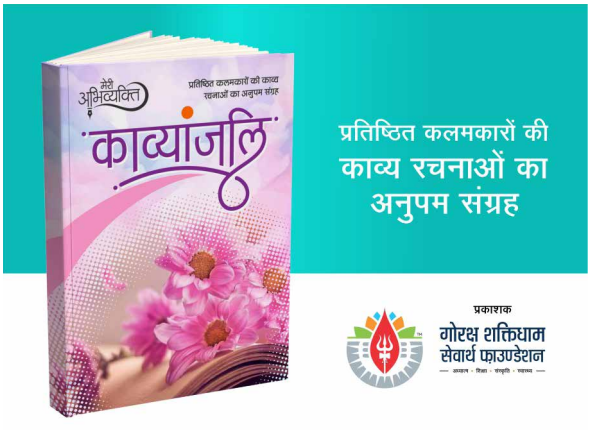

जयति जयंती वीणापाणी

डॉ. विष्णुप्रसाद पाठक
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

जयति जयंती वीणापाणी करतल बीन बजे ।
करकमले स्फाटिक माला धवल वसन शुभ्रे ।।

वर मुद्रा पद्माकर युक्ता मृदु मधु हास लिए।
मधुरावीणा की झंकृत से नव सुरताल सजे ।।

पद्मासन पर हंसवाहिनी दिक् दिगंत बिचरे।
प्रकृतिप्रिया वसंतप्रिय संयुत जनमन मोदभरे।।

हर्षोल्लास भरे जनमानस महिमा ध्यान धरे।
क्षणक्षण छंद बनें कविजन में ज्ञानालोक तले।।

वन उपवन कूके कोयलिया मधुरिम तान जगे।
मलय समीर सुमेधित संसृति मधुमधुमास रचे ।।

कुसुमित पुष्पों पर कुसुमाकर रस पराग विकरे।
सौरभ सुरभित सकल चराचर मधु गुंजार करे ।।

14 फरवरी पर विशेष

शहीद दिवस

श्रीमती शोभा रानी तिवारी
इंदौर, मध्य प्रदेश

पुलवामा में वीर शहीद हुए उनका अभिनंदन,
देशहित जो अमर हो गये, अर्पित श्रद्धा सुमन।

शरीर के टुकड़े बिखरे देख, पूरा देश रोया था,
चीख उठी थी धरती, उसमें कंपन भी हुआ था।
ज्वार उठा मां के दिल में ,उनका दिल रोया था,
मरते– मरते कटा सर भी, वंदे मातरम बोला था।
जिस जगह खून बहा, वह माटी हो गया चंदन,
पुलवामा में वीर शहीद हुए उनका अभिनंदन।

सौगंध हमें माटी की गद्दारों को सबक सिखाएंगे,
अंगारों पर चलकर हम ,तूफानों से भी टकराएंगे।
धोखे से जिसने वार किया ,वे वीर नहीं कायर थे,
उनके घर में घुसकर मारेंगे, उनका खून बहायेंगे।
तिरंगे में लिपटे वीर शहीदों को, शत–शत नमन,
पुलवामा में वीर शहीद हुए उनका अभिनंदन।

मां के दामन पर कभी भी, दाग नहीं लगने दिया,
जो बो गए मस्तक धरती में मान नहीं घटने दिया।
स्वतंत्रता की ज्योत जल रही उसे न बुझने दिया,
कुर्बान हो गए देश हित, तिरंगा नहीं झुकने दिया।
सूनी हो गई गांव की गलियां, सूना हो गया चमन,
पुलवामा में वीर शहीदों हुए, उनका अभिनंदन।

हारिए न हिम्मत, बिसारिए न राम

डॉ. साधना गुप्ता
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सहायक आचार्य
(राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय)
झालवाड़, राजस्थान

किसी भी समस्या का समाधान समस्या के ज्ञान पर निर्भर करता है, इसीलिए हमारे ऋषि–मुनियों को प्रार्थना करनी पड़ी –**''धियो योनः प्रचोदयात्''**। प्रचोदयात् अर्थात् सही तरीके से सोचना।

इस विषय को समझने के लिए हमें मूल से यात्रा प्रारम्भ करनी होगी। माँ से नवजातक का जीवन नाभिनाल से जुड़ा होता है अतः उस महान ज्योतिषमान शक्ति का संचालन केन्द्र हमारे शरीर में नाभि है, ठीक वैसे ही जैसे पावर हाऊस की बिजली का संचालन स्विच से होता है। इस नाभि के दो भाग– प्राणशक्ति व मन है। प्राणशक्ति श्वास द्वारा रक्त शुद्धि, अन्न–पाचन इत्यादि शरीर सम्बन्धित समस्त कार्य करती है। मन में शक्ति नहीं होती, केवल गति होती है। जैसे बिजली में केवल करंट। जहाँ लगा दें, वहीं चलने लगती है। हमें इस मन को ही समझना होगा।

मन – वस्तुतः मानव मनु की संतान होने के कारण मानव नहीं कहलाता वरन् मन के होने से मानव कहलाता है। यही कारण है कि मानव ही एक मात्र ऐसा प्राणी है जो अपनी फिलिंग देखने में सक्षम है। अर्थात् जब आपको क्रोध आता है तो आप यह अनुभव कर सकते हैं कि आप क्रोध में हैं। बस उसके साक्षी बनें, गुलाम नहीं। इसीलिए कहा गया है – **आनन्द में वचन मत दीजिए, क्रोध में उत्तर मत दीजिए, दुःख में निर्णय मत लीजिए, इतना छोटा कद रखिए कि सभी आप के साथ बैठ सके और इतना बड़ा मन रखिए कि जब आप खड़े हो जाऐं, तो कोई बैठा न रह सके।** अतः अपने हालात से ऊपर उठ पाने की योग्यता जाग्रत करें, – इस विषय में सम्यक चिन्तन करना ही विचार का बिन्दु है।

मनुष्य शरीर में मन ऐसी शक्ति है जिसे जीत लिया तो आप सब कुछ हैं, नहीं हो असंख्य प्राणियों में एक। परन्तु परेशानी का विषय यह है कि मन दिखता नहीं है, – जो स्मृति रखता है, याद रखता है,

प्रयास करता है, सोचता है, निर्णय लेता है, यहाँ तक कि जीवन व शरीर के तमाम कार्य करता है। तभी तो मन संतुलित है तभी तक व्यक्ति समाज के काम का है।

प्रज्ञा – अर्थात् 'बुद्धि' मन का ही परिष्कृत रूप है जो अच्छे बुरे का विचार कर निर्णय कर लेगी। मूल रूप से है यह भी माया का ही एक रूप, जो कार्यक्षमता, कार्यकुशलता में वृद्धि कर सांसारिक रूप से हमें काफी ऊँचा उठाती है परन्तु, साथ ही अहंकार में भी वृद्धि करती है। यह स्थिति ठीक वैसी ही है जैसे सूर्य के ताप से निर्मित बादल ही सूर्य को ढक लेते हैं। अतः इसे विवेक में परिवर्तित करने की बात भी की जाती है क्योंकि तब यह शत प्रतिशत शुद्ध होती है। समस्त कामनाएँ, स्व–पर की भावना से मुक्त होती है। इसके लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है – सत्संग करना, अर्थात् अपने से जो श्रेष्ठ है उसकी संगति, उसके निकट रहना, जिससे हममें उसके गुण आए। रामचरितमानस में कहा भी है – ''बिन सत्संग विवेक न होई''।

विवेक एवं आत्मसाक्षात्कार – यह इतना आसान नहीं है। इसके लिए शनै–शनै बाहर से अन्दर की यात्रा करनी होती है। इसके लिए मन का इन्द्रियों से संबन्ध तोड़ना होगा अर्थात् समाधि, तब यह मन नाभि की ओर जाएगा जिसे अन्तुर्मुखी होना कहा गया है। **इसी के लिए भगवत् गीता** में पार्थ सारथि का अर्जुन को आह्वान है **''मामनुस्मर युद्ध च''** अर्थात् निरन्तर मेरा स्मरण करके युद्ध कर। वस्तुतः प्रतिमाएँ तो जनता को समझाने के लिए प्रतिकार्थ रूप में बनाई गई है। 'माम्' शब्द का अर्थ है – ''सोऽहम्''। ''वो मैं हूँ,'' जो अन्दर से बोल रहा हैं इसी को भारतीय संस्कृति में आत्मसाक्षात्कार कहा गया है। यहाँ एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि यह स्मरण यदा–कदा नहीं, सर्वकालेषु अर्थात् निरन्तर हो। ''नि:अन्तर'', दो हिस्सों में जहाँ अन्तर नहीं, धारा प्रवाह, ठीक तेल की धारा ''वसुधारा'' के समान जो निरन्तर प्रवाहमान रहे। जरा भी बीच में अन्तर हुआ तो वह बन्द हो जाएगी। इसके लिए क्या करें? कैसे करें, यह यक्ष प्रश्न है जिसका सहज समाधान प्रस्तुत करने का लघु प्रयास यह आलेख है

मार्गदर्शक या गुरू – जहाँ तक गुरू या मार्गदर्शक की बात है, सच्चा मार्ग दर्शक मिलना कठिन ही नहीं दुर्लभ है क्योंकि किस विषय में सोचना है यह कोई नहीं बताता। सब, कैसे सोचना है यह बताते हैं क्योंकि उनका विचार है कार्य सोचने से होता है। यह बात सत्यनारायण की कथा में मूल कथा के न होने के समान ही है। वस्तुतः हमें एक सच्चा मार्गदर्शक चाहिए, जो हमें बताए – '' हम किस विषय में सोचें'' – "Ture master is needed so that he may guide us how to think" और यह गुरू हमारे अन्दर है, बाहर नहीं। अन्तर्मुखी होने के बाद जो मार्गदर्शन होगा वही माया से छुटकारा दिलाएगा जबकि बाहरी मार्गदर्शक माया में भटकाएगा। स्वामी रामकृष्ण ने कहा भी है – ''प्रकृति स्वयं अपने अन्दर से प्रेरणा देकर मार्गदर्शन करती है, वही गुरू है।'' क्योंकि आध्यात्मिक साधना में मन, बुद्धि, शरीर का कोई सम्बन्ध नहीं, शारीरिक क्रियाओं से परे सक्रिय मन को निष्क्रिय करना होता है। प्रकृति की दोहरी भूमिका, –एक ओर हमसे अच्छे कार्य की अपेक्षा व दूसरी ओर मन में विकार पैदा कर बुद्धि को चलायमान करना, से मुक्त रखने के लिए अन्तर्मुखी होने की योग्यता ही सही मार्गदर्शन करती है। अतः सर्वप्रथम हमें अपनी आत्मिक शक्ति को जागृत करना होगा। इसके लिए कही गई बात को प्रयोग करके देखें, क्योंकि कहने वाले में जो शक्ति है, वह हममें भी है तथा जो समस्या सामने है उसका मुकाबला यदि सीना तान कर किया जाए तो वह आगे आएगी ही नहीं, ऐसे ही निकल जाएगी। वस्तुतः कोई भी समस्या अपनी योग्यता को परखने का, परिचय देने का मौका हमें प्रदान करती है जिसमें हमें हारना नहीं, जीतना है, – यह संकल्प होना चाहिए, अतः निर्भय होकर मुकाबला करो,– आपकी जीत होगी, पर भाग कर जाएगें तो हार। समुद्र में लकड़ियाँ बहकर एक जगह इकट्ठी हो जाती है, पीछे से धक्का आता है लहरों का तो फिर सब चारों ओर बिखर जाती है। इस संसार रूपी प्रवाह में सब वस्तुएँ, परिस्थितियाँ इसी प्रकार एकत्रित हुई हैं, विश्वास रखिए, बिखर भी जाएगी अतः मूल मंत्र है –''वर्तमान में रहो''।

मूल मंत्र – ''वर्तमान में रहो'' – भविष्य जितनी तेजी से वर्तमान में उतरता है उतनी ही तेजी के साथ अतीत बनकर बह जाता है, अत मूल मंत्र है, –''वर्तमान में रहो'', ''हमेशा मुस्कराते रहो'', हर परिस्थिति में प्रसन्न रहो''। वर्तमान में रहने से विवेक जाग्रत होता है। विवेक जाग्रत होने से आपकी संकल्प शक्ति बढ़ जाती है, और आत्मविश्वास प्राप्त होता है, जबरदस्त आत्मविश्वास। अपना आत्मविश्वास ऐसा जाग्रत करों जिससे कार्य करने की व्यावहारिक कुशलता के लिए शक्ति अपने आप प्राप्त हो। शारीरिक श्रम मजदूर करता है। मानसिक रूप से परिपूर्ण विकसित बुद्धिमान व्यक्ति बैठकर काम करता है और संकल्पवान मात्र संकल्प से काम करता है, अतः 'Think and it will happen' ''संकल्प करों और वह पूर्ण होगा'' तथा ''Think once and decide once and never give it a second thought'' ''एक ही बार सोचकर निश्चत करलो, विकल्पों के उहापोह में न पड़ो।'' वर्तमान में रहने के लिए, – ''जो हो रहा है, उसे देखो बस''। बौद्धों की ''विपश्यना'' क्रिया इसीलिए है जिसमें ध्यान को श्वास क्रिया पर केन्द्रित करने की बात कही गई है। कबीर ने इसे ''सहज समाधि'' संज्ञा से अभिहित किया है। मंत्र विज्ञान में त्रिकुटी पर ध्यान केन्द्रित करना कहा है और योग में चित्तवृत्ति निरोध, – ''योगः चित्तवृत्ति निरोधः''। चित्त = मन, वृत्ति = भटकाव, निरोध = रोकना अर्थात् मन जो निरन्तर भटकता है उसका निरोध करना योग है। इसके लिए अनिवार्य है सतत जागरूकता।

सतत जागरूकता – (Constant awareness) – जड़ रस्सी को सर्प समझ कर हमारे अन्दर धड़कन की गति को तीव्र करना मन का काम है। बाह्य संसार की हलचल संस्कार, तरंगे (Waves) मन से आकर टकराती है। अतः **''मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मुच्यते''**। यह मन केवल गति रूप होता है। उसमें विकार,

कार्य करने की क्षमता या प्रेरणा बाहर से आती है जिसे हम संस्कार कहते हैं। घटनाओं को देखना, उनसे विचलित नहीं होना, ''जीवन मुक्त अवस्था'' है। इस हेतु मन पर निगरानी (Constant Watch) रखना जरूरी है। सतत जागरूकता (Constant awareness), कि मन भटके नहीं। पुनः स्मरण रखना है आध्यात्मिक साधना में मन, बुद्धि, शरीर का कोई सम्बन्ध नहीं। शारीरिक क्रियाओं से परे सक्रिय मन को निष्क्रिय करना है। जिसके लिए आवश्यक है – मानसिक मौन।

मानसिक मौन – मानसिक मौन ही सच्चा मौन है। यह जब एक निश्चित सीमा तक पहुँच जाता है तो उस मन से कुछ तरंगें जैसी निकलती है, जो सीधी दूसरे के मन में जाकर उस मन को प्रेरित करती है। प्रेरणा देती है कि वह भी इसी प्रकार मौन रहकर शंकाओं का समाधान पा सकता है। मानसिक मौन रहने से उस परमात्मा द्वारा आने वाले संदेश को वह व्यक्ति ग्रहण कर सकता है, सत्संग में आए अन्य व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता है, संदेश उन तक ही नहीं दूर प्रवासी व्यक्ति तक भी पहुँचा सकता है। अतः मौन सत्संग मन को शुद्ध, पवित्र करने वाला, विराट से प्राप्त होने वाले संदेशों को प्राप्त करने वाला, समझने की क्षमता विकसित करने का श्रेष्ठ साधन है जिसे हम ''टेलिपेथी'' के नाम से भी सम्बोधित करते हैं। इसकी सिद्धि के लिए आवश्यक है – सतत प्रयत्नशीलता।

सतत प्रयत्नशीलता – कोरे आशीर्वाद से कुछ नहीं होता, साधना की सिद्धि सतत प्रयासरत होने में है अतः प्रयास बढ़ाना चाहिए क्योंकि ईश कृपा और आशीर्वाद फलित होते अवश्य है, पर उसके साथ–साथ स्वयं के प्रयत्न भी जारी रहना चाहिए– **''नहि सुपतस्य सिहस्य प्रविष्यन्ति मुखे मृगाः।''** अतः अपने धर्म का पालन करते हुए सतत प्रयत्नशील रहना चाहिए।

स्व धर्मः – धर्म अर्थात् स्वभाव, कर्तव्य। जैसे पानी का धर्म है बहना, क्षत्रिय का युद्ध करना। अपने धर्म का पालन करना चाहिए क्योंकि दूसरे का धर्म अपनाना अर्थात् प्रकृति ने तुम्हें जिस उद्देश्य की पूर्ति हेतु भेजा है, जो कार्य दिया है, जो वस्त्र पहन कर अभिनय करने को कहा था, उन्हें छोड़ तुमने दूसरे वस्त्र पहने, दूसरा पार्ट खेलना प्रारम्भ कर दिया, तो सोचो, नाटक का क्या होगा?

सार रूप में शरीर पंच महाभूतों का है, हमेशा सक्रिय रहेगा, उसको सक्रिय रखो। शरीर व आत्मा को जोड़ने वाली कड़ी है ''मन'', उस मन को अलग रखो – तटस्थ। जिसके लिए वर्तमान में रहना आवश्यक है अतः वर्तमान में रहकर मन को नियन्त्रित करो। तब नियन्त्रित रहने के बाद आपको तमाम प्रश्नों के उत्तर अन्दर से ही प्राप्त होंगे, बाहर से नहीं। बाहर के उत्तर धोखा है जो माया से आए हैं। तो माया में नहीं, ब्रह्म में जाओ। यही गीता का ''स्थित प्रज्ञ'' होना है। अतः हारिए न हिम्मत बिसारिए न राम.....

मां मुझको जन्म लेने दो

अंकुर सिंह
जौनपुर
उत्तर प्रदेश

मां मुझको जन्म लेने दो,
खुली हवा में जीने दो।
भ्रूण हत्या से बचा मुझे,
गर्भ के बाहर आने दो।।

कल्पना बन अंतरिक्ष को जाऊंगी,
प्रतिभा ताई बन देश चलाऊंगी।
मुझे कोख में मत मार मां,
मैं बापू की पहचान बनाऊंगी।।

भैया संग स्कूल जाऊंगी,
घर के कामों में हाथ बटाऊंगी।
घर के आँगन में चहकने वाली मैं,
दुल्हन लिबास ओढ़े ससुराल जाऊंगी।।

दो परिवारों का सम्मान है बेटी,
मुझको भी अच्छी शिक्षा देना।
जमाना क्या कहता, परवाह नहीं,
मुझे बस तेरे ममता तले है रहना।।

मत मारो मुझको मां,
दो जीने का अधिकार।
तू भी तो एक बेटी थी,
जन्म दे मुझे कर उपकार।।

मां मुझे आज जन्म लेने दो,
अपने सपने को मुझे छू लेने दो।।
चलूंगी तेरे पद चिन्हों पर,
बस! मुझे आज जन्म ले लेने दो।।

आवरण : एक खोजपरक आलेख

अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस 21 फरवरी पर विशेष

भूमण्डलीकरण के दौर में भाषाओं पर बढ़ता खतरा

भाषाएं किसी भी संस्कृति का आईना होती हैं और एक भाषा की समाप्ति का अर्थ है कि एक पूरी सभ्यता और संस्कृति का नष्ट होना। इस तरफ सभी देशों को ध्यान देने की जरुरत है, अन्यथा दुनिया अपनी सभ्यता, संस्कृति व समृद्ध विरासत को यूँ ही खोती रहेंगी।

आकांक्षा यादव
पोस्टमास्टर जनरल आवास,
कैण्ट प्रधान डाकघर, नदेसर,वाराणसी

भूमण्डलीकरण के दौर में भाषाई संस्कृति को सहेजने की जरूरत

भूमण्डलीकरण, उदारीकरण, उन्नत प्रौद्योगिकी एवं सूचना–तकनीक के बढ़ते इस युग में सबसे बड़ा खतरा भाषा, साहित्य और संस्कृति के लिए पैदा हुआ है। भारत सदैव से विभिन्नताओं का देश रहा है। यहाँ के बारे में कहा जाता है कि यहाँ हर कोस पर पानी और हर चार कोस पर वाणी यानी भाषा बदल जाती है। पर लगता है यह मुहावरा कुछ दिनों में पुराना पड़ जायेगा। वस्तुतः भारत में बोली जाने वाली सैकड़ों भाषाओं में से 196 खत्म होने के कगार पर हैं। लेकिन इससे भी ज्यादा चिंताजनक पहलू यह है कि बोलियों का पूरा संसार ही सिमटता जा रहा है।

अभी तक विश्व में लगभग 16,000 भाषाएं बोली जाती थीं, इनमें भी वर्तमान में मात्र 6,900 भाषाएं प्रचलन में हैं। इन भाषाओं में से 2,500 का अस्तित्व खतरे में है। भाषाएं आधुनिकीकरण के दौर में प्रजातियों की तरह विलुप्त होती जा रही हैं। अगर संयुक्त राष्ट्र द्वारा वर्ष 2001 में किए गए अध्ययन से इसकी तुलना की जाए तो पिछले दो दशक में बदलाव काफी तेजी से हुआ है। उस समय विलुप्तप्राय भाषाओं की संख्या मात्र 900 थी, लेकिन यह गंभीर चिंता का विषय है कि तमाम देशों में इस ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यह एक दिलचस्प तथ्य है कि 1961 की जनगणना में भारत में जहाँ 1,652 भाषाओं का जिक्र है, वहीं 1971 में यह घटकर 182 हो गई और 2001 में मात्र 122। स्पष्ट है कि इन पाँच दशकों में भारत की 1530 भाषाएं विलुप्त हो चुकी है। इंटरनेट पर हर कुछ खंगालने वाली युवा पीढ़ी भी उन्हीं भाषाओं को तरजीह देती है जिनका उनके कैरियर से कोई वास्ता होता है। नतीजन प्रगति और विकास के तमाम दावों के बीच कई भाषाएं व बोलियाँ अपनी उपेक्षा के चलते दम तोड़ती नजर आ रही हैं। अंग्रेजी के वर्चस्व और संरक्षण के अभाव में सैकड़ों भाषाएं समाप्ति के कगार पर हैं।

दुनियाभर में भाषाओं की इसी स्थिति के कारण संयुक्त राष्ट्र ने 1990 के दशक में 21 फरवरी को अंतर्राष्ट्रीय मातृभाषा दिवस मनाए जाने की घोषणा की थी। बांग्लादेश में 1952 में भाषा को लेकर एक आंदोलन के बारे में कहा जाता है कि इसी से बांग्लादेश की आजादी के आंदोलन की नींव पड़ी थी और भारत के सहयोग से नौ महीने तक चले मुक्ति संग्राम की परिणति पाकिस्तान से अलग होकर बांग्लादेश बनने के रूप में हुई थी। इस आंदोलन की शुरुआत तत्कालीन पाकिस्तान सरकार द्वारा देश के पूर्वी हिस्से पर भी राष्ट्र भाषा के रूप में उर्दू को थोपे जाने के विरोध से हुई थी।

संयुक्त राष्ट्र की पहली स्टेट ऑफ द वर्ल्ड्स इंडीजीनस पीपुल्स रिपोर्ट में इस बात का उल्लेख किया गया है कि दुनिया भर में छह से सात हजार तक भाषाएँ बोली जाती हैं, इनमें से बहुत सी भाषाओं पर लुप्त होने का खतरा मंडरा रहा है। इस रिपोर्ट में कहा गया है कि इनमें से अधिकतर भाषाएँ बहुत कम लोग बोलते हैं, जबकि बहुत थोड़ी सी भाषाएँ बहुत सारे लोगों द्वारा बोली जाती हैं। सभी मौजूदा भाषाओं में से लगभग 90 फीसदी अगले 100 सालों में लुप्त हो सकती हैं, क्योंकि दुनिया की लगभग 97 फीसदी आबादी इनमें से सिर्फ चार फीसदी भाषाएँ बोलती हैं। यूनेस्को द्वारा किए गए अध्ययन के मुताबिक ठेठ आदिवासी भाषाओं पर विलुप्ति का खतरा बढ़ता ही जा रहा है और इन्हें बचाने की आपात स्तर पर कोशिशें करनी होंगी। यूनेस्को द्वारा कराये गये इस अध्ययन पर गौर करें तो इस रिपोर्ट में सबसे ज्यादा खतरा भारत की भाषाओं पर बताया गया है। जहाँ भारत में यह 196 भाषाओं पर है, वहीं अमेरिका व इण्डोनेशिया क्रमशः 192 व 147 भाषाओं पर खतरे के साथ दूसरे व तीसरे नंबर पर हैं। भाषाओं के मामले में सर्वाधिक समृद्ध पापुआ न्यू गिनी में 800 से ज्यादा भाषाएँ बोली जाती हैं, जबकि वहाँ केवल 88 भाषाओं पर ही खतरा है।

पीपुल्स लिंग्युस्टिक सर्वे आफ इंडिया (पीएलएसआई) के अध्ययन के अनुसार पिछले 50 वर्षों के दौरान 780 विभिन्न बोलियों वाले देश की 250 भाषाएँ लुप्त हो चुकी हैं। इनमें से 22 अधिसूचित भाषाएं हैं। जनसंख्या के आंकड़ों के अनुसार 10 हजार से अधिक लोगों द्वारा बोली जाने वाली 122 भाषाएं हैं। बाकी 10 हजार से कम लोगों द्वारा बोली जाती है। आयरिश भाषाई विद्वान जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन के बाद पहली बार यह भाषाई सर्वे किया गया है। ग्रियर्सन ने 1898–1928 के बीच भाषाई सर्वे किया था। पीएलएसआई सार्वजनिक विमर्श और अप्रेजल फोरम वाला एक गैर सरकारी संगठन है, जिसमें 85 संस्थाओं और विश्वविद्यालयों के तीन हजार विशेषज्ञ शामिल हैं।

आजाद भारत में पहली बार किए गए इस पहले सर्वे में चार वर्ष लगे। सितंबर 2013 में इसकी 72 पुस्तकों में 50 खंड की रिपोर्ट प्रकाशित हुयी। इस रिपोर्ट के अनुसार भाषाई विविधता की दृष्टि से भारत में अरुणाचल प्रदेश सबसे समृद्ध राज्य है, वहाँ 90 से अधिक भाषाएँ बोली जाती है। इसके बाद महाराष्ट्र और गुजरात का स्थान है, जहाँ 50 से अधिक भाषाएँ बोली जाती है। 47 भाषाओं के साथ ओडिशा चौथे स्थान पर है। इसके विपरीत गोवा में सिर्फ तीन भाषाएं बोली जाती हैं तो दादर और नगर हवेली में एक भाषा 'गोरपा' है, जिसका अब तक कोई रिकार्ड नहीं है। करीब 400 से अधिक भाषाएं आदिवासी और घुमंतू व गैर-अधिसूचित जनजातियाँ बोलती हैं। यदि भारत में हिंदी बोलने वालों की तादाद लगभग 52 करोड़ है तो सिक्किम में माझी बोलने वालों की तादाद सिर्फ 4 है। लिपियों के आधार पर देखें तो देश में 86 विभिन्न लिपियाँ चलन में हैं। सबसे ज्यादा नौ लिपियों के साथ पश्चिम बंगाल पहले स्थान पर है और कई अन्य लिपियों को भी विकसित करने का यहाँ प्रयास किया जा रहा है। इस राज्य में 38 विभिन्न भाषाएं बोली जाती हैं। देश की पाँच प्रतिशत भाषाएं और 10 प्रतिशत लिपियां बंगाल में पाई जाती हैं। इस सर्वे के अनुसार उत्तर-पूर्व में किसी एक व्यक्ति द्वारा बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या दुनिया में सर्वाधिक है। इसके बावजूद पूर्वोत्तर के पाँच राज्यों में बोली जाने वाली करीब 130 भाषाओं का अस्तित्व खतरे में हैं। असम की 55, मेघालय की 31, मणिपुर की 28, नागालैंड की 17 और त्रिपुरा की 10 भाषाएं खतरे में हैं।

हाल ही में भारत के अंडमान निकोबार द्वीप समूह की तकरीबन 65,000 साल से बोली जाने वाली एक आदिवासी भाषा 'बो' हमेशा के लिए विलुप्त हो गई। वस्तुतः कुछ साल पहले अंडमान में रहने वाले बो कबीले की आखिरी सदस्य 85 वर्षीय बोआ सीनियर के निधन के साथ ही इस आदिवासी समुदाय द्वारा बोली जाने वाली 'बो' भाषा भी लुप्त हो गई। अंडमान-निकोबार में चिड़ियों पर शोध कर रही जवाहर लाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली की प्रोफेसर डा. अनविता अब्बी को तो यह देखकर हैरत हुई की बोआ सीनियर चिड़िया से बात कर रही थीं और वे दोनों एक-दूसरे की भाषा समझ रहे थे। गौरतलब है कि ग्रेट अंडमानीज में कुल 10 मूल आदिवासी समुदायों में से एक बो समुदाय की इस अंतिम सदस्य ने 2004 की विनाशकारी सुनामी में अपने घर-बार को खो दिया था और सरकार द्वारा बनाए गए कांक्रीट के शेल्टर में स्ट्रैट द्वीप पर गुजर-बसर कर रही थी। 'बो' भाषा के बारे में भाषाई विशेषज्ञों का मानना है कि यह भाषा अंडमान में प्री-नियोलोथिक समय से इस समुदाय द्वारा उपयोग में लाई जा रही थी। दरअसल, ये भाषाएँ शहरीकरण के चलते दूर-दराज के इलाकों में अंग्रेजी और हिंदी के बढ़ते प्रभाव के कारण हाशिए पर जा रही हैं।

भाषाओं के कमजोर पड़कर दम तोड़ने की स्थिति का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि दुनिया भर में 199 भाषाएँ ऐसी हैं जिन्हें बोलने वालों की संख्या एक दर्जन लोगों से भी कम है। गौरतलब है कि 1974 में आइसले आफ मैन में नेड मैडरेल की मौत के साथ ही 'मैक्स' भाषा खत्म हो गई, जबकि वर्ष 2008 में अलास्का में मैरी स्मिथ जीन्स के निधन से 'इयाक' भाषा का अस्तित्व समाप्त हो गया। दुनिया की एक तिहाई भाषाएं अफ्रीकी देशों में बोली जाती हैं, आकलन है कि अगली सदी के दौरान इनमें से दस फीसदी खत्म हो जाएंगी। यूक्रेन में कराइम भाषा बोलने वाले केवल छह लोग हैं, जबकि अमेरिका के ओकलाहामा में विशिता भाषा केवल दस लोगों द्वारा बोली जाती है। इसी तरह इंडोनेशिया में लेंगिलू बोलने वाले केवल चार लोग बचे हैं। 178 भाषाएं ऐसी हैं जिन्हें बोलने वाले लोगों की संख्या 150 से कम हैं।

वाकई बोलियाँ–भाषा क्यों विलुप्त हो रही हैं। यह आपने आप में एक जटिल सवाल है। बकौल हिंदी कवयित्री और लेखिका अनामिका, हम इस बात की अवलेहना नहीं कर सकते कि भाषा और बोलियों को बचाने की शुरुआत घर से ही की जा सकती है। हर परिवार में अलग–अलग पीढ़ियाँ होती है। यह जरुरी है कि अलग–अलग घरेलू बोलियों में घर के अंदर संवाद हो। बच्चों में लोक कथाओं के मिथक, लोकोक्तियाँ, माँ–दादी व नानी की कहानियों के जरिए रुप लेती हैं। भाषाई संस्कृति का यह पूर्वराग ही अच्छी भाषा के विकास का आधार है। इस पच्चीकारी से भाषा सहज, पैनी और संवादगम्य होती है। भाषा–बोलियों को बचाने के लिए यह भी जरुरी है कि अनुवाद के जरिए दो भाषिक संस्कृतियों के बीच पुल बनाया जाय। यदि हम आज की स्थितियों में भारतीय परिप्रेक्ष्य को ही लें तो एक ओर अंग्रेजी का हौव्वा है तो दूसरी ओर हिंदी आम आदमी से कट रही है, वहीं उर्दू को मजहब से जोड़ दिया गया है। दूसरे शब्दों में कहें तो उपमहाद्वीप के राजनीतिक परिदृश्य ने दो भाषाई परंपराओं को विकलांग बना दिया। यही नहीं आज की जबान में बोलियों के लफ्जों और कहावतों के समंदर का उपयोग भी नहीं है, इससे भी भाषा कमजोर हुई है।

भारत में 1600 से ज्यादा भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलन में हैं, लेकिन इनमें से 22 भाषाओं को ही संवैधानिक दर्जा प्राप्त है। संविधान की आठवीं अनुसूची में 22 भाषाओं का उल्लेख किया गया है। इनमें 1950 में 14 भाषाएं – हिंदी, गुजराती, मराठी, कश्मीरी, असमिया, बांग्ला, पंजाबी, उड़िया, संस्कृत, उर्दू, तमिल, तेलुगू, कन्नड़, और मलयालम इस अनुसूची में शामिल थीं, जबकि 1967 में सिंधी भाषा को इस अनुसूची में शामिल किया गया। इसी तरह 1992 में कोंकणी, मणिपुरी, नेपाली और 2003 में बोडो, डोगरी, मैथिली और संथाली इस अनुसूची का हिस्सा बनीं भारतीय संविधान का अनुच्छेद 29 यह संरक्षण प्रदान करता है कि भारत के नागरिकों के एक हिस्से को अलग भाषा, लिपि या संस्कृति अपनाने का अधिकार है।

भारत में हिंदी सबसे ज्यादा बोले जाने वाली भाषा है। वर्ष 2001 की जनगणना में 41.03 फीसदी लोगों ने हिंदी को मातृभाषा बताया था जबकि 2011 में इसकी संख्या बढ़कर 43.63: हो गई। वहीं दूसरे स्थान पर बांग्ला भाषा और तीसरे स्थान पर मराठी का नंबर है। भारत में 6 भाषाएँ ऐसी हैं जिन्हें शास्त्रीय भाषाओं का दर्जा दिया गया है, जिनका एक लंबा साहित्यिक और सांस्कृतिक इतिहास है और अन्य भाषाओं से बड़े पैमाने पर उधार नहीं लिया गया है। इनमें तमिल, संस्कृत, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम और ओडिया शामिल हैं। सर्वप्रथम तमिल भाषा को वर्ष 2004 में भारत के प्रथम शास्त्रीय भाषा के रूप में मान्यता दी गई। 2005 में संस्कृत, 2008 में कन्नड़ और 2008 में तेलुगू को शास्त्रीय भाषा घोषित किया गया। भारत में 1968 में लागू राष्ट्रीय शिक्षा नीति से लेकर 2020 में जारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति तक में भाषाओं विशेषकर मातृभाषा के संरक्षण की बात कही गई है। भारत में भाषाओं की विविधता इसे एक वैशिष्ट्य प्रदान करती है। त्रिभाषा फॉर्मूला के पीछे आरंभ से ही यही अवधारणा रही है कि मातृभाषा का ज्ञान सांस्कृतिक समन्वय कराएगा, हिन्दी राष्ट्रीय समन्वय कराएगी और अंग्रेजी लोगों को वैश्विक स्तर पर जोड़ेगी।

भारत में भी तेजी से खत्म हो रही भाषाओं और बोलियों को बचाने व संरक्षित करने के प्रयास तेज हो गये हैं। सरकार लुप्तप्राय भाषाओं के संरक्षण और विकास योजना के तहत 12वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 520 अति लुप्तप्राय भाषाओं के सरंक्षण और विकास पर विचार कर रही थी। इस योजना के तहत भाषाओं का चयन बोलने वालों की सबसे कम संख्या से शुरू कर वक्ताओं की बढ़ती हुई संख्या के क्रम में किया जाना था। योजना के तहत भाषाओं और साहित्य की लिपियाँ और टाइपोग्राफी कोड बनाना, शब्दकोश तैयार करना, शब्दावलियाँ तैयार करना, लुप्तप्राय भाषाओं का विश्वकोश बनाना जैसे कार्य शामिल हैं। केन्द्र सरकार के अंतर्गत आने वाले केंन्द्रीय भारतीय भाषा संस्थान ने अपनी 'परियोजनाओं डायमेन्शन आफ लैंग्वेज इन्डैन्जरमेंट' और 'अंडमान निकोबार भाषा परियोजना' के तहत पहले भी कई लुप्तप्राय भाषाओं पर काम किया है।

केंद्र सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय (अब शिक्षा मंत्रालय) की ओर से हाल में बोलियों को लेकर एक अध्ययन कराया गया, जिसमें पाया गया कि उत्तर भारत की नौ बोलियां लगभग खत्म होने के कगार पर हैं। इनमें दर्मिया, जाद, राजी, चिनाली, गहरी, जंघूघ, स्पीति, कांशी या मलानी और रोंगपो शामिल हैं। इन बोलियों को पाँच हजार से कम लोग ही बोलते हैं। इनमें दर्मिया, जाद और राजी बोलियाँ तिब्बती–बर्मी परिवार की हैं, जो उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश में बोली जाती हैं। राजी को 668, दर्मिया को लगभग ढाई हजार और जद को इससे कुछ अधिक ही लोग बोलते हैं। ये बोलियाँ उत्तरांखड में पिथौरागढ़, धारचूला, जौलजीवी और अस्कोट में बोली जाती हैं। इसी प्रकार उत्तराखंड और हिमाचल प्रदेश में ही बोली जाने वाली चिनाली और गहरी बोलियों को बोलने वालों की संख्या भी मात्र दो–तीन हजार ही है। वाकई समय रहते यदि इनको संरक्षित नहीं किया गया तो इन्हें खत्म होने में देरी नहीं लगेगी। इन बोलियों के खत्म होने से वहाँ की संस्कृति भी खत्म हो रही है, इसलिए इनका संरक्षण बेहद जरूरी है।

ऐसे में इन बोलियों को बचाने के लिए केंद्र सरकार ने स्कीम फार प्रोटेक्शन एंड प्रिजर्वेशन आफ इनडैंजर्ड लैंग्वेज योजना शुरू की है। इसके तहत तेजी से लुप्त हो रही भाषाओं और बोलियों से जुड़े दस्तावेजों को डिजिटल स्वरूप में संरक्षित किया जायेगा। इसके तहत तमाम प्रतिष्ठित शैक्षणिक व शोध संस्थानों को इन बोलियों के संरक्षण की जिम्मेदारी दी गयी हैं। इन नौ विलुप्त प्रायः बोलियों में से तीन बोलियों दर्मिया, जाद और राजी (जंगली) के संरक्षण का दायित्व लखनऊ विश्वविद्यालय और दो बोलियों चिनाली व गहरी के संरक्षण का काम अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को सौंपा गया है। इसके अलावा दो बोलियों को बचाने का जिम्मा सीआईआईएल मैसूर और एक–एक का कोलकाता और जेएनयू, नई दिल्ली को दिया गया है। डिजिटल स्वरूप में संरक्षित करने हेतु सर्वप्रथम लुप्त होती भाषाओं व बोलियों की टेक्स्ट, आडियो और वीडियो रिकार्डिंग

की जाएगी। टेक्स्ट रिकार्डिंग के बाद बोलियों को इंटरनेशनल फोनेटिक्स अल्फाबेट्स (आईएफए) में लिखा जाएगा ताकि विश्व के भाषा वैज्ञानिक इन्हें पढ़ सकें और बोली को समझ सकें। आडियो रिकार्डिंग लाइब्रेरी में रखी जाएगी ताकि कोई भी इसको सुनकर समझ सके। वीडियो रिकार्डिंग में इन लोगों की दिनचर्या, बोलियों की संस्कृति और विशेष कार्यक्रमों को भी रिकार्ड किया जाएगा, ताकि बोलियों के साथ–साथ उनकी संस्कृति को भी संरक्षित किया जा सके। यूजीसी ने भी केंन्द्रीय विश्वविद्यालयों में लुप्तप्राय भाषाओं के लिए केंद्रों की स्थापना करने हेतु दिशानिर्देश तैयार किए हैं।

इसी क्रम में केरल विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं के एक समूह ने भी तेजी से लुप्त हो रही भाषाओं से जुड़े दस्तावेजों को डिजिटल स्वरूप में संरक्षित करने के लिए परियोजना शुरू की है। वहाँ के भाषा विज्ञान विभाग का भाषा विज्ञान अनुसंधान मंच बयारी, मलिजलाशांबा और मइगुरदुने सहित 25 भाषाओं एवं बोलियों को संग्रहित कर चुका है। इन भाषाओं को बोलने वाले अब केवल कुछ ही लोग बचे हैं। केरल की लुप्त होती बोलियों के अलावा इस समूह ने हिमाचल प्रदेश की मंतलिया और पहाड़ी भाषाओं, झारखंड की कुरमली और लद्दाख की पाली भाषा को भी रिकार्ड किया है। यहाँ के भाषा विज्ञान विभाग के तकनीकी अधिकारी एवं परियोजना प्रमुख शिजित एस के निर्देशन में शिक्षकों के दल ने लुप्तप्राय भाषाओं के बचे हुए वक्ताओं की तलाश में देश भर की यात्रा की और उसे रिकार्ड किया। इसके लिए उन्होंने अंग्रेजी में एक प्रश्नमाला तैयार किया और उन लोगों से अपनी मूल भाषा में इसका जवाब देने को कहा। इन 25 में से 15 भाषाओं के वक्ताओं को स्टूडियो में लाकर भी उनकी बातें रिकार्ड की गईं, ताकि इनका डिजिटलीकरण आसानी से हो सके।

यह भी एक रोचक तथ्य है कि विश्व में 6,000 से अधिक भाषाएं हैं जिनमें से 300 से ज्यादा भाषाओं के पास अपनी लिपि नहीं है। लेकिन यह धारणा गलत है कि जिस भाषा की लिपि नहीं है वह 'बोली' है। विश्व की ज्यादातर भाषाओं के पास लिपि नहीं है। मौजूदा समय में दुनिया की सबसे प्रभावशाली भाषा, अंग्रेजी के पास भी अपनी लिपि नहीं है। अंग्रेजी का काम 'रोमन' लिपि से चल रहा है।

वस्तुतः आज सवाल सिर्फ किसी भाषा के खत्म होने का ही नहीं है, बल्कि इसी के साथ उस समुदाय और उससे जुड़ी कई तरह की सांस्कृतिक विरासत के नष्ट होने का अहसास भी होता है। इन भाषाओं का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। इनमें से कुछेक तो कभी समृद्ध और शिष्ट साहित्य का विपुल भण्डार मानी जाती थीं। कुछेक देशों ने इस खतरे को भांपते हुए कदम भी उठाये हैं, नतीजन–ब्रिटेन की भाषा 'कार्निश' और न्यू कैलेडोनिया की भाषा 'श्श' को पहले खत्म हुआ मान लिया गया था लेकिन अब इन्हें फिर से बोला जाने लगा है। भाषा विशेषज्ञों का कहना है कि भाषाएं किसी भी संस्कृति का आईना होती हैं और एक भाषा की समाप्ति का अर्थ है कि एक पूरी सभ्यता और संस्कृति का नष्ट होना। इस तरफ सभी देशों को ध्यान देने की जरुरत है, अन्यथा दुनिया अपनी सभ्यता, संस्कृति व समृद्ध विरासत को यूँ ही खोती रहेंगी। ■

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?
क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज– कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनाएं आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 फरवरी 2023

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह पूर्णतः निः शुल्क है। रचनाएँ ई–मेल: **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

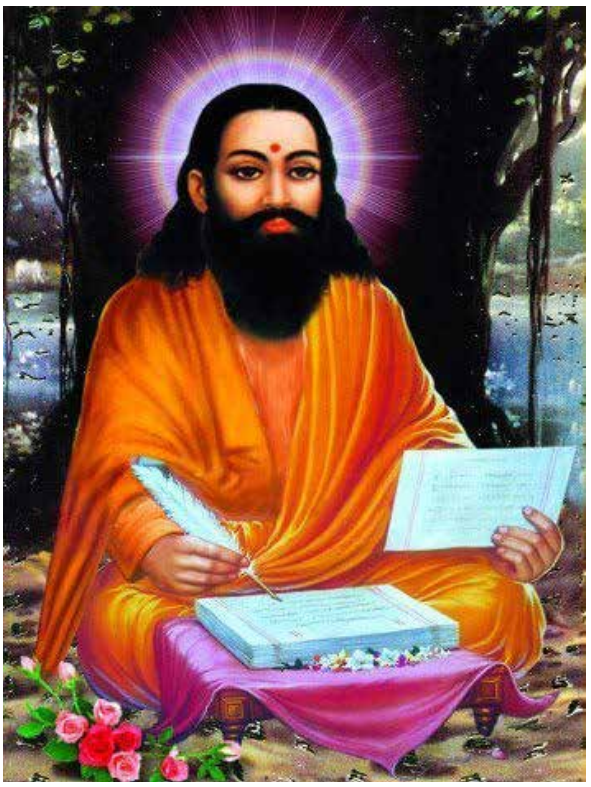

खण्डन–मण्डन से परे वैष्णव भक्त

रैदास के आराध्य

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

स्वामी रामानंद के अग्रणी शिष्य संत रैदास की ख्याति ऐसे संत के रूप में है जो खण्डन–मण्डन से परे अपनी ही धुन में मस्त रहते थे। यह एक वैष्णव भक्त थे जिनके हृदय में ऐसी तीव्र इच्छा सतत् बनी रहती कि वे अपने प्रियतम को सदा अतृप्त नयनों से देखते रहें–

चित्त सिमरनु करउं नैन अवलोकनो, श्रवन बानी सुजसु पूरि राखउं
मन मधुकर करउं चरन हिरदे धरउं, रसन अमृत राम नाम भाखउं।।[1]

प्रेम में डूबकर निरंतर नाम–स्मरण ही इनकी साधना और भक्ति थी। जाति से चमार संत रैदास की वाणी का ऐतिहासिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक दृष्टि से बड़ा महत्व है। इनकी भक्ति के आलंबन ब्रह्म के निर्गुण–सगुण उभय रूप हैं। निर्गुणोपासना के प्रखर प्रचारक संत कबीर इनके गुरु भाई थे, किंतु इन्होंने कबीर की तरह सगुण ब्रह्म का विरोध नहीं किया। उनके इष्ट अनंत सौंदर्य–युक्त अनंत शक्ति एवं अनंत शील से युक्त हैं। उनमें दया, करुणा एवं उदारता आदि गुण सहज समाविष्ट हैं। रैदास ने कृष्ण, गोपाल, हरि, माधव, राम को ब्रह्म की व्यक्त सत्ता माना है। सगुण भक्तों की भाँति रविदास ठाकुर–पूजा करते थे, क्योंकि उनका विश्वास था कि प्रस्तर के सालिग्राम में परमेश्वर निवास करता है।[2]

वैष्णवभक्तों की भाँति इन्होंने मंदिरों का निर्माण किया। बाह्याचार किया। नित अपने ठाकुर को तुलसी, चंदन, पुष्प अर्पित करते और बड़े प्रेम से भोग लगाते। तीर्थ यात्राओं में ठाकुर–सिंहासन इनके साथ रहता था। एक सच्चे आस्तिक सगुण भक्त की भाँति उन्होंने वेद–शास्त्रों का भी आदर–सम्मान किया–वे मानते हैं कि चारों वेद ईश्वर के श्वाँस हैं।[3]

अतः इनके सगुणोपासक होने में कहीं देह नहीं रह जाता।

रविदास की भक्ति–भावना में भावुकता, सहृदयता और अनुभूति की गहराई थी। भक्ति की तीव्रता में उन्होंने निर्गुण ब्रह्म के लिए उसके सगुणवाची शब्दों का प्रयोग किया है। कहीं विष्णु, बीठल, त्रिभुवनपति, कंवलापति, विष्णु, हरि, देवाधि देव[4] कहा है। कहीं 'मोहि अधाः नाम नराइन कहकर नारायण को अपना 'जीवन–प्रान–धन' माना है।

कहीं रामवाची विशेषणों से संबोधित करते हुए उसे राजा राम, राम, राघव, रघुनाथ[5] आदि कहा है।

अपने आराध्य के लिए 'माधौ' नाम इन्हें अत्यंत प्रिय है।[6] अनेक पदों में मुकुंद, गोबिन्द, केसव, कृष्ण, बासुदेव आदि अन्य कृष्णवाची विशेषणों से भी अपनी भक्ति व्यक्त की है।[7] विष्णु के अन्य अवतारों के प्रति भी अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए उनका अनेक स्थानों पर उल्लेख किया है।[8]

नाम की भाँति अपने आराध्य की विविध सगुण–लीलाओं का चित्रण भी रैदास ने अनेक पदों में किया है। जैसे–जैसे भक्तों पर कष्ट आता है उनका कार्य सँवारने वह सगुण रूप में प्रकट होता है। 'प्रह्लादचरित' में वह यही कहते हैं।[9]

प्रभु के भक्तों को कोई त्रास नहीं दे सकता। रैदास का विश्वास है जहाँ भी पाप होता है वहाँ पापी के नाश हेतु वह प्रकट होते हैं।[10] रावण के नाश के लिए राम रूप में उनक अवतार का भी उन्होंने उल्लेख किया है। सबके भीतर रमने वाला राम ही भक्तों के लिए सगुण रूप में अवतरित होता है।[11] राम, कृष्ण, नृसिंह आदि उसी निर्गुण ब्रह्म के ही सगुण रूप हैं। रैदास जी ने उन्हें ब्रह्म की व्यक्त सत्ता मानकर उनके प्रति अपनी भक्ति–भावना व्यक्त की है।

सूर, तुलसी आदि भक्तों की ही भाँति ही उसके विविध गुणों की चर्चा की है। उसे भक्त–उद्धारक और पतित–पावन कहा है। वह ध्रुव, प्रह्लाद, विभीषण, विदुर आदि भक्तों का ही उद्धार नहीं करते वरन् गीध, अजामिल, सदना, गणका आदि पापियों को भी तारते हैं। उन्होंने द्रुपदसुता की लाज रखी है। वह सभी दीनों के नाथ हैं।[12]

नाम, गुण की भाँति 'बैकुंठ' धाम की भी चर्चा रैदास की वाणी में अनेकशः हुई है।[13] भक्तों ने परमात्मा वेफ साथ विविध संबंध स्थापित किए हैं। कबीर, नानक आदि अन्य संतों की भाँति संत रैदास भी परमात्मा वेफ साथ अनेक संबंध स्थापित करते हैं। उन्हें अपने माधव का ही एकमात्रा सहारा है। वे ही उनके माता–पिता हैं। वह स्वयं को उस 'साहिब' का 'खिजमतिगार सेवक' भी मानते हैं। तुलसीदास की भाँति रविदास की भक्ति सेवक–सेव्य भाव की है जिसकी वह स्पष्ट घोषणा अपने प्रभु से करते हैं 'प्रभु जी तुम स्वामी हम दासा, ऐसी भगति करै रविदासा' दास्यभाव से अपने प्रभु को रिझाना चाहते हैं–'रविदास दास की सेवा मानहु' कहकर वह बार–बार अपने स्वामी से निवेदन करते हैं। वह जानते हैं कि सेवक अपने स्वामी पर अपना सब भार डालकर निर्भार एवं निश्चिंत हो जाता है।[14]

ध्यातव्य है कि संत कबीर रैदास के गुरु भाई थे किंतु रैदास जी ने उनकी तीव्र निर्गुणोपासनापरक विचारधारा का सम्मान करते हुए 'रविदास–कबीर गोष्ठी' में यह स्पष्ट भी किया है कि उनका ब्रह्म कबीर के ब्रह्म जैसा निर्गुण नहीं है। वह उनका साक्षात् दर्शन करते हैं। वह उन्हें कदम्ब पेड़ की छाया में विश्राम करता पाते हैं। वह पीताम्बरधारी है। उनके हृदय पर वैजयंतीमाला और सिर पर मोरमुकुट सुशोभित है–

स्वामी ठाढ़े देखै कदम्ब की छाया, कमल नाल कर लीयै।
पीत बसन बैजन्ती माला, मोर मुकुट सिर दीयै।[15]

साकार 'केशव' की सगुण भक्ति में डूबे रविदास हर जन्म में चमार बनने को तैयार हैं।[16]

जब कबीर उन्हें 'त्रिकुटि संगम' का उपदेश देते हैं तो वह उनसे निवेदन करते हैं कि वह उन्हें उस गुपाल के गुण गाने दें जिसके रूप पर ब्रज–वनिताएँ ठगी गई हैं।[17] वह नंदलाला का चहुँ ओर दर्शन पाते हैं। भक्तों की भाँति वह उनके रूप उपासक हैं। चकोरवत् वह अपने प्रभु को देखते अघाते नहीं–

प्रभु जी तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा।[18]

ब्रह्म को निर्गुण–सगुण दोनों रूपों में ग्रहण करने का समर्थन उनके अनेक पदों में मिलता है–

तू सगुण निगुण निरामयी, र्निबिकार, हरि अंजन निरंजन–अप्रेमवं।
तू प्रमात्मा परकिरती अबिगति, सुचिदानंद गुण ग्यानं गेहं।[19]

उनकी दृष्टि में ब्रह्म उभय रूप है। खंडन–मंडन की प्रवृत्ति से रहित निर्गुण–सगुण की उपासना के झगड़े से दूर रहकर वह एक सच्चे भक्त की भाँति कहते हैं–कि ब्रह्म उभय रूप है।[20]

अन्तर्साक्ष्य के अतिरिक्त बाह्य प्रमाण भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि रैदास ब्रह्म के निर्गुण–सगुण उभय रूप के पोषक थे।[21] वे सगुण–निर्गुण को एक ही ब्रह्म के दो अंग मानते हैं। 'एक ब्रह्म के जानिऐ सगुण–निर्गुण द्वै अंग' जैसी उक्तियाँ इसी तथ्य की पुष्टि करती हैं। एक ओर निर्गुण भक्तों की भाँति वह कहते हैं–

अबरन बरन रूप नहीं जाकै। सु कहाँ लौ जाइ समाई।[22]

तो दूसरी ओर वह अपने इस अरूप आराध्य का निर्निमेष दर्शन भी चाहते हैं। वह हरि को और हरि उन्हें देखें यही सगुण भक्तों जैसी परस्पर प्रीति रविदास को अभीष्ट है–

तू मोहिं देखैं हौं तोहिं देखूँ, प्रीति परसपर होई।[23]

अपने आराध्य के निर्गुण–सगुण समन्वित रूप के विषय में संत रैदास को कोई भ्रम नहीं है। निर्गुण–निराकार रूप में वह हृदय के भीतर विराजमान हैं और सगुण–साकार रूप में बाहर। दोनों एक हैं जिसकी अभेदता का उन्होंने अनेकशः वर्णन किया है। उनकी मान्यता है कि सच्चिदानंद राम अज, अविनाशी एवं अशरीरी रहते हुए भी जड़ जीव जगत् का आश्रय हैं, गुण–ज्ञान का घर हैं और अपनी माया से अवतार रूप में प्रकट होकर अपने भक्तों का उद्धार करते हैं।

संदर्भ

1. संतगुरु रविदास–वाणी, सं. डॉ. बी. पी. शर्मा, प्रथम सं., पद 102
2. 'मूरति मांहि बसै परमेसुर, तौ पानी मांहि तिरै रे।' वही, पद 55
3. चारि बेद जाकै सुम्रिति स्वांसा भगति हेत गावै रविदासा। संत गुरु रविदास वाणी, पद 76
4. देखिए संतगुरु रविदास वाणी, क्रमशः पद 137, 108, 101, 137, 9
5. वही, पद 45, 39, 5, 107
6. माधै! मुहि इकु सहारौ तोरा।। वही, पद 73
7. देखिए वही, क्रमशः पद 125, 84, 37, 13, 137
8. नरहरि! चंचल है मति मोरी, कैसे, भगती करूँ राम तोरी। – वही, पद 13
9. जहँ जहँ भीर परि जग मंह, भगतन के काज संवारै।। वही, प्रह्लाद चरित, छंद 18
10. जहाँ जहाँ पाप परगट भया, तहाँ तहाँ उफ उठि धवा। वही, रविदास–कबीर गोष्ठी, 17
11. रमिता राम सोई है स्वामी! हिरदै करौ बिचारा।
    रावण मारि बभीषण थाप्या, ध्रया रामचन्द्र औतारा। वही, वही, 21
12. देखिए क्रमशः संत गुरु रविदास वाणी, पद 151, 163, 138, 20
13. आस करै बैकुण्ठ गवन कउ, चल मन कभउ न थिरायौ। वही, पद 150
14. देखिए क्रमशः संत गुरु रविदास वाणी, पद 73, 82, 66, 20
15. वही, रविदास–कबीर गोष्ठी, 11
16. तुम्हरी भगति के कारने, पिफरि ह्वै हौं चमार। संतगुरु रविदास–वाणी, पद 160
17. त्रिकुटि संगम रहन दै स्वामी! गावण दै गोपाला।–वही, रविदास–कबीर गोष्ठी, पद 15
18. वही, पद 66
19. वही, पद 162
20. अगुन स्रगुन दौ समकरि जान्यौ, चहुं दिस दरसन तोरा। वही, पद 73
21. कबीर कौ मन निरगुन राचा, अवरु मता सब दीसै काचा।
    इतनी सुनी रैदास रिसानां, नृगुन श्रगुन एक करि जानां।
    श्रगुन थापै सेनि रैदासा, कबीर के मन नृगुण आसा।
    वही, रविदास–कबीर गोष्ठी के आरंभ में अनंतदास वैष्णव का कथन।
22. संत गुरु रविदास–वाणी, प्रह्लाद चरित, पद 12
23. वही, पद 13

सुश्री इंदु सिंह 'इंदुश्री'
स्वतंत्र लेखन
नरसिंहपुर, मध्य प्रदेश

शिव अपना प्रेम जताते नहीं है फिर भी पार्वती जी हर जन्म और हर रूप में उनका ही वरण करना चाहती हैं क्योंकि, वे जानती हैं कि, कभी अपने स्नेह व अनुराग को व्यक्त न करने वाले उनके अर्धांग उन्हें इतना चाहते हैं कि अपने अर्धनारीश्वर स्वरूप में उन्होंने उन्हें आधा स्थान ही नहीं अपने बराबर का मान दिया जहां दोनों एक समान है दोनों एक रुप है आधे होकर भी पूरे है एक–दूसरे के बिन अधूरे हैं। इसलिए कोई भी जन्म हो जगतजननी उन्हें पाने के सिवा कोई दूसरी कामना नहीं करती उन्हें पाने कठोर तप, साधना व व्रत करती हैं जबकि, शिव उनके लिए ऐसा कुछ भी नहीं करते फिर भी वे उन्हें ही जीवनसाथी के रुप में पाने की कामना करती हैं। क्योंकि, वे जानती हैं कि बाहर से भले वे अपने अंतर का दर्शन नहीं कराते लेकिन, उनके हृदय मंदिर में उनकी ही छवि विराजमान है, व शिव नेत्र मूंदकर उनको ही निहारते रहते हैं। पार्वती जी में इतना धैर्य नहीं कि वे अपने अंदर विराजमान शिव की प्रतिकृति से ही संतुष्ट हो जाएं उन्हें तो अपने भोलेनाथ साकार रूप में भी चाहिए वो भी ऐसे कि बार–बार उन्हें विरह की पीड़ा न सहनी पड़े और जब मिले तो ऐसे कि एकरूप हो जाएं।

इसलिए सती के बाद उन्होंने पार्वती बनकर ऐसा व्रत किया जिसने उन्हें जन्म–जन्मांतर के लिए एक कर दिया गौरी–शंकर बनाकर नाम उन दोनों का सदा–सदा के लिए जोड़ दिया और कार्तिकेय–गणेश की माताजी बनकर उनकी गृहस्थी भी ऐसे पूर्ण हुई कि हर दंपति ऐसे ही सुखी व खुशहाल परिवार की कामना करने लगे। श्रावण मास व महाशिवरात्रि के आते ही हर लड़की शिव जैसे पति की इच्छा लेकर मंदिर में जाती है शिव अभिषेक व उपवास कर महादेव से उनके जैसे वर की अपने मनोकामना निवेदित करती हैं। जो इतना सीधा–साधा व भोलाभाला हो कि उसकी हर बात माने और प्रेम वह इतना करे कि दोनों में कोई भेद न रहे जैसे पार्वती ने वर पाये शिव ऐसे हर कन्या को मिले मनचाहा पति यही हर लड़की की इच्छा होती है। जिसे वो बिना कहे उनकी पूजा–अभिषेक कर नन्दी बाबा के कानों में फूंक देती जो उन तक पहुंच जाती और पूरी हो जाती है। जिसकी नहीं होती वह बार–बार यही दोहराती और जो उनके जैसा कोई न मिले तो बिना ब्याह ही जीना चाहती है। एक होकर जीने का आशीष न मिले तो एकाकी ही जीवन ठीक है और इस जन्म में न सही तो अगले जन्म में जरूर उसकी पुकार सुन लें कि, पार्वती जैसा अटल–अडिग संयम व तप तो सम्भव नहीं पर, यथासम्भव

वह जरूर साधना व याचना कर रही तो हर सोमवार, सावन और महाशिवरात्रि में न जाने कितनी कन्याएँ यह कहती हैं।

जीवन में सब सुख–सुविधाएं निरर्थक लगती हैं जब साथी सही नहीं होता जो शिव जैसा मिल जाये तो जन्म धन्य हो जाता कि शिव ऐसे पति जो मुख से प्यार जताते नहीं पर, अपनी भंगिमाओं व अपने क्रियाकलापों से बता देते कि पार्वती उन्हें सर्वाधिक प्रिय है। सती रुप में जब वे अपने प्राणप्रिय का अपमान सहन न कर पाई और यज्ञवेदी में अपने आपको होम कर दिया तब यह ज्ञात आने पर महादेव ने रौद्ररूप धारण कर यज्ञ विध्वंस कर दिया और अकेले रहने का संकल्प लिया। फिर वे पार्वती बनकर आईं तो शिव को पाने अन्न–जल सब त्याग कठोर व्रत किया और सप्त ऋषियों के मनाने पर भी अपना संकल्प दोहरा दिया कि मेरा तो करोड़ जन्मों तक यही हठ रहेगा कि या तो शिवजी को वरूँगी, नहीं तो कुंवारी ही रहूँगी ऐसा प्रेम अन्यत्र दुर्लभ है शिव–पार्वती तो दाम्पत्य का अप्रतिम उदाहरण हैं ।

प्रेम पर दोहे

व्यग्र पाण्डे
गंगापुर सिटी
(राजस्थान)

प्रेम सरस जीवन करें, प्रेम श्वांस विश्वास।
जीवन की ये वाटिका, देती रहे सुवास।।

रुपया पैसा जगत में, ना जीवन का सार।
बनना है गर धनिक तो, करो प्रेम व्यापार।।

प्रेम मर्म संसार का, प्रेम धर्म इंसान।
अपनाया जिसने इसे, बन जाता भगवान।।

प्रेम भाव वरदान है, ईश्वर का हर जीव।
तन का घर सुदृढ़ रहे, सदा प्रेम की नींव।।

प्रेम रत्न जिस पास ना, वो हैं सब कंगाल।
देख सकते हो उन्हें, यहाँ वहाँ बेहाल।।

प्रेम छाँव भगवान की, प्रेम ईश्वर प्रसाद।
सुजन सुमन से वे सभी, जिनसे दूर प्रमाद।।

मैं भारत हूँ

डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'
लेखिका, कवियत्री, गीतकार
वाराणसी

शुचि वेद मंत्र नित आत्म भरे
मैं सत्य सनातन भारत हूँ।
मैं विजय पताका धर्मो की
मैं सिंधु सभ्यता शाश्वत हूँ।।

शोभित है भाल हिमालय–सा
हिय में पावन गंगा धारा।
मनु वंशज भरत, ऋषभ– आत्मज
मैं शक्ति एकता का नारा।।

मैं संस्कृत भाषा संस्कारित
अध्यात्म ज्योति आलोकित हूँ।
शुचि वेद मंत्र .....।।

हर भेद–भाव को छोड़, विश्व–
का ज्ञान गुरू कहलाता हूँ।
आँखों में लेकर जग–पीड़ा
जनतांत्रिक राग सुनाता हूँ।।

हर धड़कन में, मैं धड़क रहा
उज्ज्वल स्वरूप में अविगत हूँ ।
शुचि वेद मंत्र.....।।

मानस का चिंतन प्रगतिशील
सम्पन्न हृदय संघर्षो से
गरिमा मंडित इतिहास पूज्य
जय सत्यमेव उत्कर्षो से।।

सांस्कृतिक धरोहर स्वर्ण कलश
निष्ठा से नित्य सदाव्रत हूँ।
शुचि वेद मंत्र.....।।

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

जब व्यक्ति पैदा होता हैं वह नैसर्गिक होता हैं। हमारे चारो तरफ पेड़ पौधे, वृक्ष, नदियां, पहाड़ आदि भी नैसर्गिक होने पर बहुत सुन्दर दिखाई देते हैं। मनुष्य के पास मन, बुद्धि होने से उसमे नीर क्षीर विवेक होने से हर वस्तु में गुण अवगुण, लाभ हानि देखना शुरू करता हैं। बालक भी जब तक उसका विवेक जाग्रत नहीं होता वह भोला भाला रहता हैं, वह प्रकृति के नजदीक रहने से उसमे ईश्वरीय रूप दिखाई देता हैं, जब वह बालक १० वर्ष के बाद विवेकवान होने से उसमे धीरे धीरे चालाकी के गुण आने लगते हैं। क्योकि उसमे बुद्धि के साथ साथ परिवार परिवेश का प्रभाव पड़ने लगता हैं। इसी समय से उसमे प्रदर्शन, प्रतिस्पर्था के साथ प्रतिष्ठा का बोध जाग्रत होता हैं।

जब बालक शनैः शनैः बड़ा होता जाता हैं तो उसको संसार छोटा लगने लगता हैं जबकि जन्म के समय उसको पालना बड़ा महसूस होता हैं। जैसे जैसे ज्ञानवान होता जाता हैं उसमे कुछ करने की जिद आने लगती हैं। सबसे पहले उसके मष्तिष्क में परिवार के संस्कारों का प्रभाव पड़ता हैं। यही से वह सच झूठ, अच्छा बुरा लाभ हानि का विचार आने लगता हैं। यही समय होता हैं जब हम उसमे धार्मिक, सामाजिक, विचारो का बीजारोपण करने लगते हैं और वह उसी क्षेत्र में आगे बढ़ता हैं। इसके बाद जब वह किसी विशेष क्षेत्र में पढ़ने जाता हैं या अपने पैतृक व्यवसाय को अपनाता हैं तब उसे विकास का बोध करता हैं। जब वह छोटा रहता हैं वह अज्ञानदशा में मनमानी करने लगता हैं पर जब वह वयस्क होता हैं तब वह ज्ञान, बुद्धि को अंगीकार कर कल्पना लोक में जीना शुरू करता हैं। इसी संधिकाल में वह अपनी इच्छाएं को जन्मता हैं, और वह सबकी चाहना करता हैं।

जब वह यौवन में आता हैं तब वह स्वयं के साथ साथ अन्यो के साथ खिलवाड़ करना शुरू करता हैं। व्यवसाय या अपने क्षेत्र में स्थापित करने के लिए वह विवेकशून्य होकर कुछ भी करता हैं .उसकी चाह अनंत होने लगती हैं, यहां से खिलवाड़ की प्रवत्ति शुरू होती हैं, जब तक हम प्राकृतिक रहते हैं सादा जीवन उच्च विचार को अपनाते हैं उसके बाद वह प्रकृति का दोहन शुरू करता हैं। जिसका माध्यम धन/दौलत/पैसा होता हैं। उस पैसे के लिए वह भविष्य का परिणाम देखे कुछ भी करने लगता हैं। जबसे भौतिकता का चलन चला सबसे पहले उसने अपने आप से खिलवाड़ किया यानी मायाचारी, लोभ के कारण संग्रह की प्रवत्ति बनी। उसके लिए भवन, फर्नीचर, सजावट के लिए अन्य सामग्री का संग्रह शुरू किया। इसके साथ उसने जंगल की कटाई, बाँध बांधकर जल का दोहन, भोजन के लिए मांसाहार के बाबत जानवरों की हिंसा करना शुरू किया। यह प्रकृति पृथ्वी जल वायु आकाश और अग्नि से निर्मित हैं और मन होने से मनुष्य कहलाने लगे। ये पंच महाभूत सीमित हैं पर मानव ने इनका असीमित दोहन किया, कर रहा हैं और करेगा। कारण जब शराबी शराब पीकर मदमस्त होता हैं तब

वह विवेकहीन होने पर अपनी माता, बहिन, पुत्री और पत्नी के प्रति विवेक खोने लगता हैं। जब साधन सम्पन्न हो जाता हैं तब उसे प्रतिबंधित क्षेत्र में प्रवेश करना अच्छा लगता हैं। यदि हम अपनी अभी तक के जीवन काल का आत्मवलोकन करेंगे तब पाएंगे हमने प्रकृति के साथ कितना अधिक खिलवाड़ किया हैं, प्राकृतिक दोहन में गगनचुम्बी भवन बनाना, सडकों का चौड़ीकरण करना, दिन रात धरती के ऊपर वाहनों का चलना, धरती जैसे धैर्यवान कौन होगा, जिसका चीरहरण हर पल होता हैं, जब उसकी सहन शक्ति असहनीय होती हैं तब वह अंगड़ाई लेती हैं तो सब धरा पर धरा रह जाता हैं।

जल का दोहन अकथनीय हैं जब के लिए धरती की छाती पर सैकड़ो फीट की खुदाई कर पानी निकाल कर उपयोग किया। अब हम जल के लिए तरस रहे हैं .सुना हैं दो दो नदियों को मिलाकर पानी के बांध बना रहे हैं। यह बहुत बड़ी भ्राँति हैं की पानी हाइड्रोजन और ऑक्सीजन का संयोग हैं, नहीं हर नदी के पानी के गुण दोष अलग अलग होते हैं। हम पानी को विकृत कर रहे हैं। वायु की महिमा अपरम्पार हैं, उसके बिना जीवन रह नहीं सकता पर वर्तमान में हमें शुद्ध हवा नसीब नहीं हैं। दिन रात फैक्टरियों, वाहनों का उपयोग हमारे विनाश का कारण हैं। आज महानगरों में शुद्ध हवा का नामोनिशान नहीं हैं। प्रदूषित वायु के कारण हम अनेकों रोगों से ग्रसित होते जा रहे हैं और ताजी हवा हमारे नक्षत्र से समाप्त होने की कगार पर हैं।

अग्नि जिससे हमें ऊर्जा मिलती हैं जिसका प्रमुख स्त्रोत सूर्य हैं उसमे से ओजोन परत हटाने से हम ऊर्जा को तरसने लगे आज फैक्टरियों, वाहनों, के साथ निजी जीवन में प्राकृतिक ऊर्जा का उपयोग नहीं करते दिन रात बिजली, ऐयरकण्डीशनर, पंखा मशीनों के कारण जलवायु प्रदूषित होकर हम परेशां होते हैं। जैसे अत्यधिक गर्मी पड़ना, कम या अधिक वर्षा होना, असंतुलित वर्षा या ठण्ड पड़ना। आज पृथ्वी पर जगह की कमी होने से गगनचुम्बी भवन बन रहे, वायुयान अब आकाश में ज्यादा उड़ते हैं, अंतरिक्ष की खोज से हम असुरक्षित हो रहे हैं। परमाणु बम के कारण पूरी दुनिया मौत की कगार पर हैं। अब हम इतने आगे बढ़ चुके हैं की हम प्राकृतिक अवस्था में न आ पाएंगे। अब हमारे विनाश की शुरुआत बहुत तेज गति से शुरू हो चुकी हैं जम्बू कश्मीर हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड में प्रकृति के साथ इतना अधिक खिलवाड़ किया जा चुका हैं की अब विकास के नाम पर विनाश की शुरुआत हो चुकी हैं।

विनाश के समय में अकाल, मौत और भय व्यापत होता हैं जिसके लक्षण दिख रहे हैं। हर व्यक्ति अपनी कंपनी को लिमिटेड क्यों बनाता हैं अनलिमिटेड नहीं .खाना सीमित क्यों खाता हैं। अपनी कार एक सीमा से अधिक क्यों नहीं चलाता पर प्रकृति के दोहन में असीमित क्यों? खाना सीमित क्यों और पेटियों में धन असीमित क्यों? खिलवाड़ हमारे मन से शुरू होता हैं। हमें सबसे पहले अपना मानसिक प्रदुषण दूर करना होगा और स्वयं सीमित होकर अनावश्यक प्रकृति से खिलवाड़ नहीं करना होगा तभी हम सुरक्षित रह पाएंगे अन्यथा विनाश का मार्ग हमने स्वयं चुना हैं। ■

जय श्री महाकाल! ॐ अलख निरंजन को आदेश! जय श्री भैरवनाथ!

स्वः पूजयन्ति देवास्तं मृत्यलोके च मानवः। पाताले नागलोकाश्च श्रीगोरक्ष नमोऽस्तुते ।।

यदि ईश्वर में आस्था है?
तो कष्ट से मुक्ति का रास्ता है!

आस्था है? रास्ता है?

निःसंतान दंपति मिलें।

जन हित में निःस्वार्थ सेवा

सप्ताह में केवल दो दिन **मंगलवार एवं शनिवार** आने से पहले फोन पर समय लेना अनिवार्य है।

संपर्क: **योगी शिवनंदन नाथ** Ph. : 0731-4918681, M. : 7415410516 **हवा बंगला रोड़, इंदौर, मध्य प्रदेश**

वृद्धावस्था में सदैव सकारात्मक कैसे रहें

डॉ. शारदा मेहता
स्वतंत्र लेखन
ऋषिनगर विस्तार,
उज्जैन (म.प्र.)

गर्भावस्था के पश्चात जन्म लेने के बाद मानव विभिन्न अवस्थाएँ धारण करता है– यथा– शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था तथा अन्त में वृद्धावस्था। इन सभी अवस्थाओं में जीव विभिन्न रूपों से होता हुआ अनेक क्रियाकलापों में संलग्न रहता है और अन्त में वृद्धावस्था को प्राप्त होता है। अपने पूर्व जन्मांतरों में किए गए शुभ–अशुभ कर्मो के अनुसार फलों को भोगकर अन्त में परमधाम की यात्रा पर चला जाता है।

इन सभी अवस्थाओं में वृद्धावस्था जीवन का अन्तिम पड़ाव है। इस अवस्था में मानव परिपक्व हो जाता है। उसके पास अनुभवों का विशाल खजाना होता है। इस अवस्था में शारीरिक रूप से व्यक्ति कमजोर हो जाता है। बेटे–बहू, पोते–पोती, नाती–नातिन के मध्य वह अपने आपको सुरक्षित अनुभव करता है। भारतीय संस्कृति की यही विशेषता रही है। हर भारतीय इस सत्य से परिचित ही है।

पाश्चात्य संस्कृति ने जिन घरों में प्रवेश कर लिया है, वह तो न्यूक्लीयर परिवार हो गए हैं। एक या दो बच्चे और पति–पत्नी तक ही उनका परिवर सीमित हो गया है। घर के वृद्ध माता–पिता, ग्रामीण क्षेत्रों में या शहरों में निवास करते हैं। वे नौकर चाकर या परिवार के रिश्तेदारों के आश्रय में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। न्यूक्लीयर परिवारों के बच्चों को भारतीय रिश्तों से कोई वास्ता नहीं है। विदेश में ही उन्हें अच्छा लगता है। दादा–दादी, नाना–नानी, चाचा–चाची, बुआ–फूफाजी जैसे महत्वपूर्ण रिश्ते भी उनके लिए खास नहीं है। संयुक्त परिवार की विशेषता उन्होंने केवल पुस्तकों में पढ़ी है या डिजिटल डिवाइस में देखी है। वृद्ध व्यक्तियों की सेवा करना, उनके कार्यो में सहर्ष सहायता करना उन्हें भाता नहीं है। जिन बच्चों के माता–पिता भारतीय हैं वे अपने बच्चों में संस्कार का रोपण कुछ सीमा तक कर ही देते हैं।

वृद्धावस्था से भयभीत नहीं होना चाहिए। इसे मानव जीवन के उपहार के रूप में स्वीकार करना होगा। प्रौढ़ावस्था तक हमने जैसा जीवन यापन किया है वैसा इस अवस्था में संभव नहीं है। इस अवस्था में सरलता से जीवन जीने का प्रयत्न करना चाहिए। निरर्थक जिद नहीं करना

चाहिए। पचहत्तर वर्ष की उम्र के पश्चात् व्यक्ति शारीरिक रूप से अशक्त हो जाता है और कुछ व्याधियों का सामना भी उसे करना पड़ता है। कई प्रकार की औषधियों का सेवन आवश्यक हो जाता है।

वृद्धावस्था में मानव का चिन्तन दार्शनिक होना चाहिए। अपनी सोच सकारात्मक होगी तो स्वभाव में चिड़चिड़ापन तथा दूसरों की प्रत्येक बात में मीन मेख निकालने की आदत में सुधार होगा। घर का वातावरण भी शान्त रहेगा। वृद्धजनों की आज्ञा का पालन भी होगा। वैज्ञानिकों का कथन है हमारे शरीर के सेल हमेशा टूटते रहते हैं और उनके स्थान पर नए सेल का निर्माण होता रहता है। इसलिए हम हमेशा नए बनते रहते हैं। वृद्ध जन अपने आपको वृद्ध न मानें। वृद्धावस्था में अधिक सामान का मोह नहीं होना चाहिए, क्योंकि यदि कोई सामान गुम हो जाता है तो उसका दुःख असहनीय हो जाता है। घर के सदस्य सामान खोजने में सहायता करते हैं, उनका भी समय नष्ट हो जाता है। जहाँ तक हो सके अनावश्यक लोभ को त्यागने का प्रयत्न करना चाहिए।

वृद्धावस्था में नवीन पीढ़ी को कुछ देते रहना चाहिए। धन, दौलत, सम्पत्ति की चर्चा हम यहाँ नहीं कर रहे हैं वरन् उनमें अच्छे संस्कारों के रोपण की चर्चा कर रहे हैं। संध्याकाल के समय घर के बच्चों को श्लोक, भजन, प्रार्थना आदि सिखाएँ। उनको साथ लेकर गिनती पहाड़े बोलें। सामान्य ज्ञान के प्रश्नों के उत्तर पूछें। धार्मिक लघुकथा सुनाएँ। उनसे धार्मिक प्रश्न पूछे। समय–समय पर उन्हें पुरस्कृत करें। उन्हें आशीर्वाद दें। उन्हें आनन्द आएगा। वे आपको सहयोग करेंगे। भारतीय संस्कृति के प्रति उनका आकर्षण बढ़ेगा। वे सदैव आपको याद करेंगे और नवीन सामाजिक कार्यक्रमों में वे नया कीर्तिमान स्थापित करेंगे।

वृद्धावस्था में अपनी शारीरिक क्षमता के अनुसार छोटे–छोटे कार्य करते रहना चाहिए। स्वावलम्बन अति आवश्यक है। इससे हाथ पैर चलते रहते हैं। जकड़न नहीं होती है। यदि चल फिर सकते हैं तो अपनी दवा ले लें। अपने कपड़ों की तह करके यथा स्थान रख दें। दैनिक समाचार पत्र के समाचार पढ़ लें। भगवान के जप करें, यदि कुछ आवश्यक पाठ करते हों तो नियमित रूप से करें।

घर के सदस्यों के अच्छे मार्गदर्शक बने। हर समय उन्हें राय देने के बजाय जब आपसे पूछा जाए तभी अपने अनुभवों का लाभ उन्हें उचित सलाह देकर दें। जिद्दी बनकर अपना सन्ताप न बढ़ाएं। सबके साथ मिलकर रहें। जिन्दादिल बनें। इसमें ही जीवन सुखी है। घर के युवा सदस्य वृद्धों को बोझ न समझें। खान–पान में सात्विकता रखें। वाणी पर संयम रखें। हमेशा अपने पद की गरिमा का ध्यान रखें। यदि वृद्ध व्यक्ति अनासक्त रहेंगे तो वृद्धावस्था आनन्दमय हो सकती है। यह अवस्था वर्चस्व स्थापित करने की नहीं है। अनर्गल शब्द तथा चुभने वाली बात नहीं बोलना चाहिए। घर के सदस्यों की एक–दूसरे के सामने बुराई करना, मीन मेख निकालना आदि बुरी आदत है। इससे आपस में वैमनस्य बढ़ता है, उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचती है। घर का वातावरण तनावपूर्ण हो जाता है और सब आपस में मुँह चढ़ाकर रहने लगते हैं। कई वृद्ध घर में पधारे हुए सदस्यों के सामने घर के सदस्यों को कटु शब्द बोलना, उन्हें डाँटना, अपमानित करना आदि ऐसी आदतें हैं, जिनसे कई पीढ़ी आहत होती है। नई पीढ़ी में सहनशीलता का अभाव दिखलाई देता है। इससे वे वृद्ध लोगों के वचनों से आहत हो जाते हैं। वे वृद्धजनों की अवहेलना करते हैं। ऐसी स्थिति में माता–पिता का कर्त्तव्य है कि वे बच्चों का पक्ष न लें और उन्हें समझा दें। उन्हें वृद्धों के प्रति उचित व्यवहार करना सिखलाएँ।

मानव जीवन एक पुष्प के समान है। एक कली जब पुष्प बनती है तो बड़ी सुन्दर आकर्षक लगती है। धीरे–धीरे समय के साथ मुरझाकर वह जमीन पर पँखुड़ियों के रूप में गिर जाती है। उसी प्रकार मनुष्य भी जन्म लेता है। दुनिया के रंगमंच पर विभिन्न प्रकार की क्रीड़ाएँ करता है, सुख–दुःख सभी का सामना करता है और अन्त में वृद्धावस्था को स्वीकार कर अपने परमपिता परमेश्वर के धाम चला जाता है। यह स्वाभाविक प्रक्रिया है। नियति का क्रम है, जिससे कोई नहीं बच सकता है। जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु निश्चित है। विद्वान कवि भर्तृहरि अपनी संस्कृत साहित्य की प्रसिद्ध कृति ''शतक त्रयी'' के वैराग्य शतक में लिखते हैं–

आदित्यस्य गतागतैरहरहः संक्षीयते जीवितम्,
व्यापारैर्बहुकार्यभारगुरुभिः कालो न विज्ञायते।
कृष्ट्वा जन्मजराविपत्तिमरणं त्रासश्च नोत्पद्यते,
पीत्वा मोहमयीं प्रमाद मदिरा मुन्मत्त भूतं जगत्।।७।।

(वैराग्य शतक)

अर्थात– सूर्य के उदय और अस्त के साथ मनुष्यों की जिन्दगी रोज घटती जाती है। समय भागा जाता है, पर कारोबार में व्यस्त रहने के कारण वह भागता हुआ नहीं दीखता। लोगों को पैदा होते और मरते देख कर भी उनमें भय नहीं होता। इससे मालूम होता है कि मोहमाया, प्रमादरूपी मदिरा के नशे में संसार मतवाला हो रहा है।

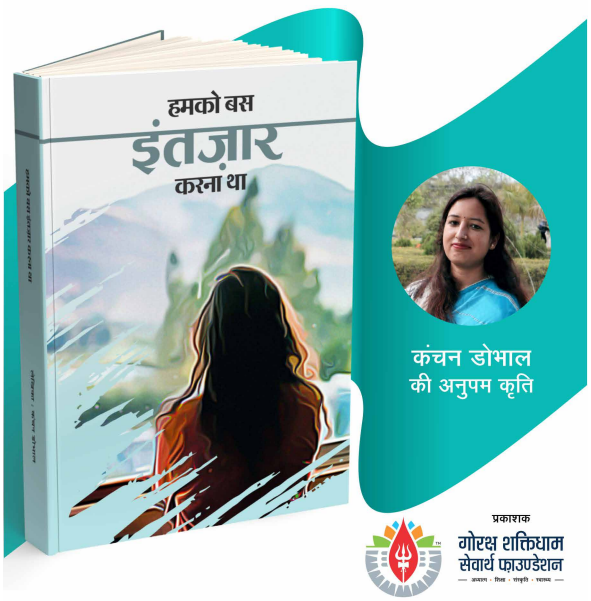

मातृ-भक्ति के प्रतीक शिवाजी

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

भारत के इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं जिनमें माता की शिक्षा का महान प्रभाव स्पष्ट होता है। शिवाजी का जीवन उनकी माता जीजाबाई की महान शिक्षाओं का अनुपम उदाहरण है।

महाराष्ट्र प्रदेश की शिवनेर की पहाड़ियों के एक दुर्ग में शिवाजी का जन्म 19 फरवरी, 1630 में हुआ था। उनके पिता शाहजी बीजापुर राज्य की एक जागीर के स्वामी थे। शिवाजी की माता जीजाबाई ने उन्हें प्रजा के हित चिंतन करने, असहायों की रक्षा करने, स्त्रियों और बच्चों की रक्षा करने, सभी धर्मों का आदर करने की अनेक शिक्षाएं दी। जीजाबाई उन्हें रामायण और महाभारत के वीरों की कथाएं सुनाती थी इससे शिवाजी में वीरत्व का गुण पैदा हुआ। उस समय देश की राजनीतिक दशा बड़ी शोचनीय थी। औरंगजेब के आतंक ने जनता को पीड़ित कर रखा था। निरंतर युद्ध का वातावरण देश में पनप रहा था। जिससे जन–धन की हानि हो रही थी। ऐसे समय में शिवाजी का पालन हुआ। गुरु रामदास और दादा कोण देव से शिवाजी ने अस्त्र विद्या सीखी।

माता जीजाबाई की शिक्षा के बल पर ही शिवाजी अन्याय, छल–कपट, अत्याचार और दासता के विरोधी बने। उन्होंने 18 वर्ष की अल्पायु में ही स्वराज की स्थापना के लिए युद्ध प्रारंभ किया। शिवाजी अत्यंत साहसी, वीर और दृढ़ प्रतिज्ञा वाले थे। उन्होंने युद्ध में अपने शत्रुओं को पराजित किया और स्वतंत्र राज्य की स्थापना की।

शिवाजी ने जीवन भर मां की आज्ञा का पालन किया। कल्याण के किले को जीतने के उपरांत जब वह युद्ध में प्राप्त सामग्री का निरीक्षण कर रहे थे तो उनके सामने सूबेदार मुल्ला अहमद की पत्रवधू गौहर बानू को पेश किया गया। शिवाजी ने नारी जाति के सम्मान को ध्यान में रखते हुए गौहर बानू को आजाद कर दिया और सकुशल उसके पिता के पास पहुंचाने का आदेश दिया। उन्होंने अपने राज्य में योग्य व्यक्तियों को स्थान दिया गया। वह बड़े वीर, योग्य और साहसी शासक थे। मराठा राज्य के वह संस्थापक थे। भेद भावों से दूर रहने वाले शिवाजी अपनी माता के अनन्य भक्त थे।

शिवाजी के जीवन का अध्ययन करने से पता चलता है कि उन्होंने जीवन भर अपनी माता की शिक्षाओं का पालन किया। वे अपनी मां के जितने बड़े भक्त थे, उनकी उतनी ही गहरी आस्था, उन शिक्षाओं और मूल्यों में थी जो उनकी माता जीजाबाई से उन्हें उपदेशों के रूप में मिले थे।

योग्य माताओं के आस्थावान पुत्र निश्चय ही जीवन में महान कार्य संपन्न करने में सफल होते हैं। शिवाजी का 3 अप्रैल, 1680 को स्वर्गवास हो गया था।

धरती के लाल शहीद चंद्रशेखर आजाद

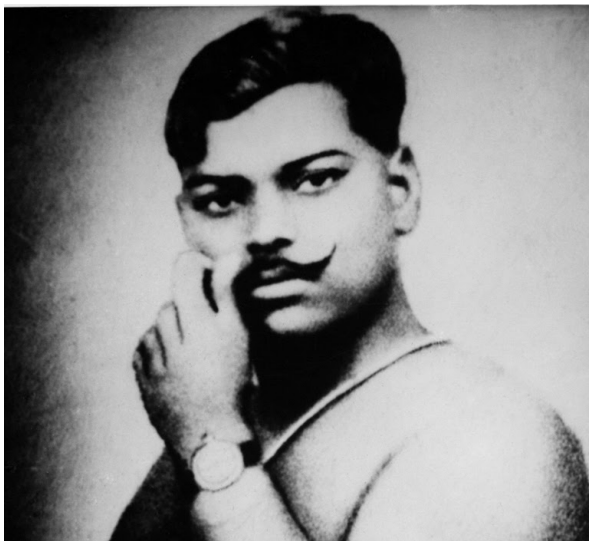

सौम्या पाण्डेय 'पूर्ति'
ग्रेटर नोएडा

हिंदुस्तान की धरती को बंधन मुक्त कराने के लिए लाखों शीश कट गए, तब कहीं जाकर आज की पीढ़ी को 'आजादी' के सूर्य के दर्शन हुए हैं, परन्तु बलिदान की कहानी अमर बलिदानी 'आजाद' के बिना अधूरी है, जिन्होंने मात्र पच्चीस वर्ष की युवावस्था में अपने देश की स्वतंत्रता के लिए निज प्राणों की सहर्ष आहुति दे दी थी। सहस्त्र बलिदानियों के मध्य 'आजाद' ने अपनी एक अलग ही छवि बनाई एवं बलिदान का ऐसा रूप प्रस्तुत किया जो कि अपनी तरह का एकमात्र उदाहरण है।

आजाद जिनका पूरा नाम 'पण्डित चंदशेखर तिवारी' था, उन्होंने स्वयं को देश की स्वाधीनता के लिए ऐसा झोंका कि अपना उपनाम 'आजाद' ही रख लिया व 'चंद्रशेखर आजाद' के नाम से ही जाने गए। २३ जुलाई १९०६ को 'पण्डित सीताराम तिवारी' एवं माता 'जगरानी देवी' के घर भाबरा गांव में आजादी का यह विशिष्ट सूर्य उदित हुआ था । मूलतः उन्नाव जिले के 'आजाद' का बचपन प्रारंभ में मध्यप्रदेश के आसपास के आदिवासी बहुल इलाके में भील समुदाय के मध्य बीता जिससे बचपन से ही आजाद धनुष बाण चलाने एवं निशानेबाजी में निपुण हो गए थे। उनका साहस अदम्य था, जब वो मात्र चौदह वर्ष के थे तो उसी समय गांधी जी ने 'असहयोग आंदोलन' प्रारंभ किया था, जिसमें अपने विद्यालय के छात्रों के साथ आजाद न केवल सम्मिलित हुए अपितु गिरफ्तार भी हुए। उस छोटी सी अवस्था में उन्हें १५ बेंतो की सजा सुनाई गई परन्तु साहस तो देखो बालक आजाद का कि हर बेंत की चोट पर उनके मुख से बस यही उदघोष निकला 'भारत माता की जय', यही प्रारंभ था आजाद की स्वाधीनता की यात्रा का, जिसे उन्होंने निज प्राणों के सर्वोच्च बलिदान तक निभाया।

आजाद को भेष बदलने में भी महारत हाँसिल थी, वो कब किस रूप में कहाँ उपस्थित होते थे ये कभी कोई न जान सका, उन्हें पहचानने में ब्रिटिश शासकों के पसीने छूट जाते थे पर आजाद अपना काम चुटकियों में करके निकल जाते थे, हारकर अंग्रेज शासकों को उन्हें पहचानने के लिए लगभग ७०० लोगों को उनके पीछे लगाना पड़ा था पर वो कभी भी किसी के हाथ न आये। उन्होंने अपने छद्म नाम 'पंडित हरिशंकर ब्रह्मचारी' के रूप में न केवल क्रांतिकारियों को प्रशिक्षित ही किया अपितु बच्चों के अध्यापन का दायित्व भी वर्षों तक सम्भाला, अपने जीवन का प्रत्येक पल उन्होंने देश की सेवा को अर्पित कर दिया था।

आजाद जोश से भरपूर थे अतः स्वाधीनता के निशस्त्र प्रयासों के विपरीत उन्होंने सशस्त्र आंदोलन का समर्थन किया। इसके लिए उन्होंने देशभर के जोशीले वीर नवयुवकों को एकत्रित किया जिनमें 'सरदार भगत सिंह, पण्डित राम प्रसाद बिस्मिल, राजगुरु, अशफाक उल्ला खां, शचीन्द्र नाथ सान्याल, योगेश चंद्र चटर्जी' जैसे स्वतंत्रता सेनानी सम्मिलित थे जिनके साथ मिलकर आजाद ने पहले 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसियेशन' व बाद में कई साथियों के

बलिदान के पश्चात अन्य विभिन्न क्रांतिकारियों को संगठित करते हुए 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसियेशन' का निर्माण किया, जिसका प्रमुख उद्देश्य सशस्त्र क्रांतिकारी गतिविधियों को पूर्ण करना था।

वैसे तो आजाद ने कई योजनाओं को कार्यान्वित किया था परंतु जो उल्लेखनीय हैं एवं अंग्रेजों की नींव हिला गई वो हैं, –

'काकोरी कांड'

'लाला लाजपतराय की निर्मम हत्या का बदला सांडर्स का वध करके लेना'

'असेम्बली में बम फेंकना' इत्यादि ।

यही घटनाएं कालांतर में प्रमुख रूप से स्वतंत्रता के संग्राम को एक नई दिशा दे गई, जिनसे प्रेरित होकर अनेकों युवा आजादी की लड़ाई में कूद पड़े एवं अथक प्रयासों से अंततः देश को स्वाधीन कराने के अभीष्ट संकल्प को साकार कर सके ।

आजाद की लोकप्रियता एवं स्वतंत्रता का मुखर आंदोलन अंग्रेजों की आंख की किरकिरी बन गया था। सारी अंग्रेजी फौज आंदोलन को संभालने से ज्यादा आजाद की खोज में लगी हुई थी। उन्हें पहचानना नामुमकिन था अतः अंग्रेजों ने कई मुखबिर उनके पीछे लगा दिए। अंततः वही हुआ जो देश के गद्दारों के जरा से लालच में होता है, आजाद अल्फ्रेड पार्क इलाहाबाद में अपने मित्र के साथ मंत्रणा करने पहुंचे थे कि तभी पार्क को अंग्रेजी फौज ने घेर लिया। आजाद अकेले थे परंतु उन्होंने तब भी हिम्मत न हारी, वहीं पार्क में एक पेड़ के पीछे से मोर्चा संभाल लिया। दोनों ओर से भयंकर गोलीबारी हुई, आजाद ने तीन पुलिसकर्मियों को मौत के घाट उतार दिया एवं न जाने कितनों को घायल कर दिया, अंत में जब उनके पास सिर्फ एक गोली बची तो उन्होंने अंग्रेजों के हाथों मरने की जगह स्वंय को गोली मार ली व अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया। २७ फरवरी १९३१ का वो दिन सदा के लिए इतिहास के पन्नों में अंकित हो गया।

अंग्रेजों में इतना भी साहस न था कि आजाद के बलिदान की घोषणा करते बल्कि उन्होंने उनका अंतिम संस्कार चोरी छुपे कर दिया परन्तु जैसे ही उनके बलिदान की सूचना नगर में फैली ऐसा लग रहा था कि पूरा जगत उनके बलिदान के विद्रोह में अल्फ्रेड पार्क में उतर आया हो। उनके बलिदान से आजादी की ऐसी आग भड़की कि फिर देश को आजाद करा कर ही थमी। इससे पूर्व स्वतंत्रता सेनानी 'खुदीराम बोस' को यह सम्मान मिला था कि उनकी राख घर–घर में ले जाई गयी थी, उसी प्रकार जिस वृक्ष के नीचे 'आजाद' ने अपने जीवन का बलिदान किया वो वृक्ष पूजनीय बन गया था, लोग उस स्थान की पवित्र मिट्टी को अपने शीष पर लगाते व अपने घर ले जाते। आजाद के बलिदान के पश्चात लाखों आजादी के मतवाले निज प्राणों की आहुति के लिये उध्दत हो उठे, ऐसे थे हमारे देश के अनमोल रत्न 'पंडित चंद्रशेखर आजाद' जो अपने नाम के अनुरूप अपने साहस व बलिदान से सदैव के लिए अमर हो गए, ऐसी महान विभूति को शत–शत नमन ।

आजादी के मतवाले

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

भारत माँ की आजादी को, बहुत यहाँ कुर्बान हुए।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

हमने रच डाली नव गाथा,
लेकर खडग हाथ अपने
नहीं हटाये बढ़े हुये पग,
पूर्ण किए सारे सपने

माटी को निज माथ लगाकर, सारे मंगलगान हुए ।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

शत्रु नहीं बच पाया हमसे,
पूतों ने हुंकार भरी
भगतसिंह जैसे मतवाले,
विजयघोष – जयकार भरी

आजादी ने माँगी कीमत, वीर सभी बलिदान हुए।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

इंकलाब की लाज निभाने,
तीन रंग का मान बने
जन गण मन का नगमा गाया,
तीन रंग की शान बने

भारत छोड़ो के नारे के, मतवाले सहगान हुए ।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

बिस्मिल, आजादों के कारण,
हमने आजादी पाई
नेहरू – गांधी के नारों ने,
तन पर तो खादी पाई

ब्रिटिश हुकूमत काँप उठी तब, पूर्ण सभी अरमान हुए।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

आजादी के मतवालों ने,
इतिहासों को रच डाला
त्याग दिया निज का सुख सारा,
विश्वासों को रच डाला

पूत बने सब गौरव–गरिमा, सारे ही यशगान हुए।
गोरों से लड़कर के सारे, देशभक्त संतान हुए।।

साइबर शोक

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उ.प्र.

राजेश्वरी देवी के प्राण पखेरू उड़ चुके थे। उनका मृत शरीर फर्श पर दरी पर रखा हुआ था। शोक संवेदको की भीड़ थी। उनका पोता व बेटा कैमरा लेकर धड़ाधड़ फोटो खींच रहे थे। शव के पास बैठे हुए शोकाकुल पड़ोसियों में फूसफसाहट हुई कि यह भी कोई फोटो खींचने का वक्त है, तो पता चला कि इनके दो बेटे अमेरिका में बसे हुए हैं उन्हें ही फेसबुक पर भेजनी है। कम से कम मरते समय की अम्मा जी की फोटो ही देख लेंगे, अंतिम संस्कार के लिए तैयार करते व जाते व गाड़ी यानी शव यान में रखते समय भी हर कोण से उनकी फोटो ली गई। माताजी के शांति पाठ व हवन से भी डिजिटल कैमरों से अनेकानेक फोटो खींची गई। सभी आगंतुकों से भी बारी–बारी आहुतियां डलवाते हुए विभिन्न तस्वीरें बेटे और पोते ने खींची और सारी फोटो फेसबुक पर अपलोड कर दी।

एक हफ्ते बाद अमेरिका में रहने वाले दोनों बेटों ने भी घर में शोक मनाने की फोटो और विदेश में माता जी के नाम से सुंदरकांड का पाठ कराने के अनेकों फोटो भी फेसबुक पर अपलोड कर दी और मैसेज कर दिया कि कृपया फेसबुक देखिए। जब भी कोई मिलने आता तो राजेश्वरी देवी का पोता बेटा अपने अमेरिका वाले भाइयों की फेसबुक खोलकर जरूर दिखाते कि वे लोग माताजी की लम्बी बीमारी व् स्वर्गवास में आए तो नहीं लेकिन उनके दिलों में माता जी के लिए बेहिसाब प्यार है। दिवंगत आत्मा को क्या पता कि जिन बेटों ने गंभीर बीमारी में भी कभी उनकी सुध नहीं ली वे अब साइबर शोक के द्वारा स्वयं की अंतरात्मा को आत्मग्लानि से बचाने के लिए सिर्फ बहकावे की छतरी दे रहे थे। देखने सुनने वालों में राजेश्वरी के तीनों ही बेटे व् बहुओं के बीच आपसी सामंजस्य की चर्चाएं भी गर्म थी। ■

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

खासी लोक कथाओं में नैतिकता

डॉ अनीता पंडा
शिलांग, मेघालय

मेघालय की 'खासी' जनजाति में लोक कथाओं का अकूत भण्डार है। 'ये कथाएँ मनुष्यों से लेकर चौपायों, दोपायों और पक्षियों तक के प्रेम से पगी हैं। इन लोककथाओं के माध्यम से घर के बड़े–बुजुर्ग बच्चों में संस्कार एवं सीख देते हैं । इनमें से कुछ चुनिन्दा कथा का सन्दर्भ प्रस्तुत हैं।'

'खासी' जनजाति में सूरज को संसार की सबसे सुन्दर स्त्री माना जाता है और चाँद को पुरुष, जो बहन–भाई हैं। कहते हैं युवा चाँद की नियत अपनी बहन सूरज के प्रति खराब हो गई और उसने एक दिन अपनी बहन के सामने शादी का प्रस्ताव भी रख दिया, जिसके कारण सूरज ने उसके मुँह पर जलती राख फेंकी। जलती राख से चाँद के चेहरे पर दाग पड़ गए और भयभीत होकर वह सूरज से मुँह छिपाता फिरता है। जब सूर्यास्त होता है, तब चाँद निकलता है। यह जनजाति समुदाय की कल्पना की सहज अभिव्यक्ति है, जहाँ अपनी बहन के प्रति कामुक दृष्टि रखना वर्जित है।

कहा गया है – घमण्डी सिर नीचा होता है। प्रचलित खासी लोककथा "का स्केई" में हिरण को अपनी तेज रफ्तार पर बहुत घमण्ड था। वह सदा आत्मप्रशंसा करता रहता था और घोंघे का तिरस्कार करता। उसे सबक सिखाने के लिए घोंघों ने एक गुप्त योजना बनाई और हिरन को लूरी–लूरा (साप्ताहिक बाजार) तक दौड़–प्रतियोगिता के लिए चुनौती दी। अपनी बुध्दिमत्ता से घोंघा की जीत होती है और घमण्डी हिरण का सिर नीचा होता है। जीत का रहस्य यह था कि घोंघे ने दौड़ के मार्ग में अपने समाज के पूरे सदस्यों को गुप्त रूप से खड़ा कर दिया था।

मानव–मन महत्वकांक्षी होता है। कुछ तो प्रयास करते हैं और कुछ अपने जीवन की कमियों के लिए ईश्वर पर दोषारोपण करते हैं पर इस बात से अनभिज्ञ रहते हैं कि उनकी दुर्बलता का कोई गलत लाभ उठा सकता है। ऐसा ही हुआ "का ब्लांग"(बकरी) के साथ।

वह सदैव अपनी तुलना शेर से कर अपनी कमजोरी के लिए "उ ब्लेई" को कोसती थी पर उसे नहीं मालूम था कि उसकी हिलती दाढ़ी देखकर शेर भी डर जाता था। एक दिन शेर ने का ब्लांग को पहाड़ी पर जोर–जोर से अपनी दुर्बलता के बारे में कोसते सुना। सत्य का पता चलते ही उसने अवसर पाते ही का ब्लेई को धर दबोचा। अतः अपनी दुर्बलता पर कोसने बजाय उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

आलस्य प्राणी का सबसे बड़ा शत्रु है यह सन्देश देती खासी लोककथा "उ आहिल्या" में एक ऐसे आलसी व्यक्ति के वर्णन है, जो सोता ही रहता है। यहाँ तक कि उसके गाँव में आक्रमणकारी आए तो उसकी पत्नी ने उसे जगाने की कोशिश की पर उस पर कोई असर नहीं हुआ। हारकर उसकी पत्नी बच्चों को लेकर सुरक्षित स्थान में चली गई। आक्रमणकारी घर में घुस आए। जब उसने चादर से मुँह बाहर निकाला तो आक्रमणकारियों ने तलवार से उसे मार डाला।

खासी आदिवासी समाज में मानवीय मूल्यों का चिंतन को बहुत सहजता से व्याख्यायित किया गया है। यहाँ आदर्श की स्थापना हेतु ग्रंथों की रचना नहीं हुई न ही सूक्ति वाक्य लिखे गए है। ये प्रकृति के सामान ही सरल है, अभिजात्य और चमत्कार से परे मानवीय संवेदनाओं से भरपूर है।

इतनी शक्ति दे गुरुवर

मधुबाला शांडिल्य
शिक्षिका, लेखिका
झारखंड

तेरे चरण सजाऊं फूलों से
इतनी शक्ति दे गुरूवर
पूरे भक्ति भाव से याद करूं
तन मन धन से तुझे मैं अर्पित करूं
तेरे भक्त की सीमा छोटी है
तू नैया पार लगा देना
तेरे चरण को पूजूं फूलों से
मेरी राहों में फूल बिछा देना
तेरे चरण सजाऊं फूलों से
इतनी शक्ति दे गुरूवर.....

मेरे राहों में कांटे जो बोये हैं
उसे फूलों में तूं ही बदल देना
तेरे आश पे हम तो बैठे हैं
मेरी नैया पार लगा देना
तेरे भक्त के आंख में आंसू हैं
वो तुझको समर्पित करती हूं
स्वीकार करो तुम ओ गुरुवर
नयनों से जो बरसे पानी हैं
तेरे चरण सजाऊं फूलों से
इतनी शक्ति दे गुरूवर.....

मोह माया के पाश बंधे हैं हम
इससे मुक्ति मुझे दिला देना
तेरे आश पे हम तो बैठे हैं
मेरी नैया पार लगा देना
एक भाव ही पास तो है मेरे
हम तेरे बिना तो अधूरे हैं
तेरे भक्त की बुद्धि खोटी है
उसे अमृत भाव पिला देना
तेरे चरण सजाऊं फूलों से
इतनी शक्ति दे गुरूवर.....

एक स्वप्न है मेरा तेरे लिए
जिससे भलीभांति तू परिचित है
तेरे आश पे हम तो बैठे हैं
मेरी नैया पार लगा देना
इतनी शक्ति मुझे दे गुरुवर
हम मंदिर तेरी बना पाएं
तुझे पूजें पूरी भक्ति से
इतनी श्रद्धा तूं मुझमें बना देना
तेरे चरण सजाऊं फूलों से
इतनी शक्ति दे गुरूवर.....